ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 18 मई 2014 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 18 मई 2014 से 24 मई 2014

ज्ये. कृ. 04 ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 108, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. पटियाला में मनाया गया 'आर्य समाज स्थापना दिवस'

आर्य युवा समाज डी.ए.वी. पटियाला द्वारा नव विक्रमी संवत (2071) व 'आर्य समाज स्थापना दिवस' के शुभावसर पर 'मेधावी छात्र–अभिनन्दन समारोह' का आयोजन किया गया। इस समारोह में वर्ष 2013–14 की वार्षिक परीक्षा में शानदार सफलता प्राप्त करने वाले विद्यालय के मेधावी छात्रों का अभिनन्दन किया गया।

समारोह का शुभारम्भ वैदिक मन्त्रोच्चारण के साथ हवन से हुआ; जिसमें मेधावी छात्रों, उनके अभिभावकों व अध्यापकों ने आहुतियाँ प्रदान की। इस अवसर पर श्री विजय कुमार शर्मा (क्षेत्रीय निर्देशक, डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल फिरोजपुर व पटियाला जोन) मुख्य अतिथि के रुप में पधारे। उन्होंने अपने सम्बोधन में कहा, ''तत्कालीन समाज में फैली हुई 'बाल–विवाह', 'अशिक्षा', 'पाखण्ड', 'अंधविश्वास' व 'जात–पात' आदि कुरीतियों को समाप्त करने के लिए 1875 ई. में आज के दिन युगप्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने 'आर्य समाज' की स्थापना की थी।

प्राचार्य एस. आर. प्रभाकर ने मुख्य अतिथि का स्वागत किया। 'आर्य समाज' को एक सामाजिक आन्दोलन बताते हुए उन्होंने कहा, ''आर्य समाज कोई सम्प्रदाय नहीं, बल्कि एक सामाजिक आन्दोलन है। यह किसी विशेष मज़हब के लिए नहीं अपितु सम्पूर्ण राष्ट्र के उत्थान व समाज कल्याण में कार्यरत है।''

इस अवसर पर भक्तिभाव पूर्ण 'बनो आर्य खुद और जहाँ को बना दो' व 'मेरा प्यारा आर्य समाज युग–युग जीवे' भजन प्रस्तुत कर सारे वातावरण को भक्तिमय बना दिया। अकस्मात् निकले आर्य समाज अमर रहे', 'वैदिक धर्म की जय' व 'भारत माता की जय' के जयघोषों से स्कूल परिसर गूँज उठा।

मुख्य अतिथि, प्राचार्य व अन्य अतिथिगण ने सत्र 2013–14 की वार्षिक परीक्षा में प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को स्मृति चिह्न व प्रमाण–पत्र देकर सम्मानित किया तथा कक्षा बारहवीं में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त करने वाले एवं एन. आई.एस.ई, एन. ई. ई.टी. व आई.आई.टी की परीक्षा में राष्ट्रीय स्तर पर विशेष स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को भी सम्मानित किया।

राष्ट्रीय गान के साथ समारोह सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी. बुढ़ार में महात्मा जी का जन्मोत्सव

डी.ए.वी. बुढ़ार पब्लिक स्कूल बुढ़ार में महात्मा हंसराज जी का 151वाँ जन्मोत्सव अत्यन्त ही धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर उद्घोष करते हुए प्रभातफेरी निकाली गई। प्रभात फेरी विद्यालय परिसर का भ्रमण करते हुए यज्ञशाला। तदन्तर विद्यालय के संस्कृत शिक्षक आर्य परमानन्द शर्मा जी द्वारा वैदिक यज्ञ का अनुष्ठान करवाया गया। इस वैदिक यज्ञ में मुख्य होता की आसन्दी से विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती विजय लक्ष्मी नायडू जी ने महात्मा जी के त्रिगुणात्मक यश का स्मरण करते हुए परमात्मा को आहुति अर्पण की। इस अवसर पर विद्यालय के सभी शिक्षक – शिक्षिकाएँ छात्रगण तथा तृतीस एवं चतुर्थ श्रेणी के सभी कर्मचारी उपस्थित थे।

विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती विजय लक्ष्मी नायडू जी ने अपने आशीर्वाद उद्बोधन में महात्मा जी के स्वार्थत्याग, मित्तव्ययता एवं आत्मनिर्भरता के गुणों का विशद विवेचन कर उनके जीवन वृत्त का उल्लेख किया गया।

आगे उन्होंने कहा कि कोई भी संस्था हो या मनुष्य वह तभी उन्नति कर पाता है जब इन तीनो गुणों का अनुपालन किया जाये। महात्मा हंसराज जी शिक्षा के साथ–साथ अनगिनत सामाजिक कार्य भी किये।

प्राकृतिक विपदा में भी महात्मा जी चट्टान के समान अचल रहते हुए कार्य किया। उन्होंने उनके कार्यों की भूरि–भूरि प्रशंसा की। शांति पाठ के साथ ही वैदिक अनुष्ठान सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी. वेलचेरी, चेन्नई में नई पीढ़ी को एड्स मुक्त करने की पहल

एच.आई. वी वायरस मानव जीवन में फैलकर उसे अपने विषदंतों से डस रहा है। ये वायरस चोरी–छिपे मनुष्य जीवन पर मूक कातिल बनकर वार कर रहा है, जो कि लाइलाजा है। 2 दिसम्बर 2013 को डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल में विश्व एड्स मनाया गया, जिसका उद्देश्य था– शून्य संक्रमण, शून्य मृत्युदर और शून्य विभेदन। इस जागृति कार्यसूची को कक्षा दसवीं से बारहवीं तक के छात्रों ने एकीकृत किया। इस अवसर पर गैतोंड केयर वालंटियर हैल्थ सर्विस तारामनी के प्रशिक्षक श्री समीश कुमार जी ने छात्रों को संबोधित किया। प्रस्तुतीकरण के दौरान श्री सतीश कुमार जी ने विश्व में एच.आई.वी संक्रमित बालकों की संख्या का ब्यौरा दिया। इस तथ्य की सच्चाई को उजागर करते हुए उन्होंने बताया कि इस रोग से ग्रसित गृहिणियों की एवं बालकों की तादाद बढ़ रही है और देह व्यापार करने वालों की संख्या घट रही है। उन्होंने अपने व्याख्यान में एक और कड़वी सच्चाई को उजागर किया। इस जहरीले वायरस का शून्य संकमण न हो पाने का कारण इस गलत व्यसन में लगे लोगों का निष्ठुर व्यवहार और स्वास्थ्य चिकित्सा का दुरुपयोग है। अपने भाषण में उन्होंने इस रोग के आपतन और व्यापकता को कम करने के तरीके बताए एवं समाज के लोगों के बदले दृष्टिकोण से इस संकमित लोगों को मिले नैतिक न्याय को भी सराहा। सतीश जी ने एच.आई. वी से ग्रस्त रोगियों के स्वास्थ्य रक्षा संबंधी सेवाओं पर खास प्रकाश डाला। कार्यक्रम के अंतिम चरण में कुछ जिज्ञासु छात्रों ने स्वास्थ्य जागरूकता से संबंधित प्रश्नों को भी पूछा, जिसका उत्तर श्री सतीश जी द्वारा दिया गया।

छात्रों द्वारा नुक्कड़ नाटक के माध्यम से जागरूकता अभियान चलाया और एड्स मुक्ति का संकल्प लिया।

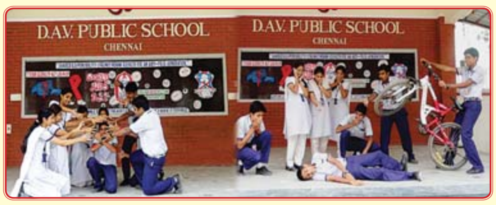

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 18 मई, 2014 से 24 मई, 2014

हिरण्य-धारण

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

आयुष्यं वर्चस्य् रायस्पोषमौद्भिदम्।
इद् हिरण्यं वर्चस्वज्, जैत्रायाविशतादु माम्।।

यजु ३४.५०

ऋषिः **दक्षः**। देवता **हिरण्यं तेजः** छन्दः **भुरिग् उष्णिक्।**

● (**आयुष्यं**) आयु के लिए हितकर, (**वर्चस्यं**) ब्रह्मवर्चस को प्राप्त कराने वाला, (**रायस्पोषं**) ऐश्वर्य का पोषक (**औद्भिदं**) (शत्रुओं, विघ्न–बाधाओं एवं दुःखों को) उद्भिन्न कर देने वाला (**इदं**) यह (**वर्चस्वत्**) आत्म–कान्ति से युक्त (**हिरण्यं**) हिरण्मय तेज (**जैत्राय**) विजय के लिए (**मां**) मुझमें (**आविशतात् उ**) प्रविष्ट होवे।

● संसार के युद्ध–क्षेत्र में शत्रुओं, विघ्न–बाधाओं और दुःखों से संघर्ष करते हुए मुझे विजय प्राप्त करनी है। यदि मैंने विजय का उपाय न किया तो शत्रु मुझे निगल जायेंगे, बाधाएँ एक पग भी आगे न बढ़ने देंगी, दुःख निरन्तर कचोटते रहेंगे। इन सब पर विजय पाने के लिए आवश्यक है कि मैं 'हिरण्य' धारण करूँ। 'हिरण्य' सुवर्ण का नाम है। सुवर्ण तेजस्वी होता है, अतः ज्योति या तेज को भी 'हिरण्य' कहते हैं। मैं अपने शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा में 'ज्योति' को धारण करूँगा। शरीर को स्वस्थ, सबल, तेजस्वी बनाऊँगा। मन को शिव संकल्पवाला, अडिग, तेजोमय बनाऊँगा। बुद्धि को त्वरित गति से सही निश्चय पर पहुँचनेवाली, शक्तिशालिनी, भास्वती बनाऊँगा। आत्मा को बलवान, विवेकशील, ज्योतिष्मान् एवं वर्चस्वी बनाऊँगा। अब तक मैं व्यथे ही सुवर्ण के आभूषण बनवाकर अंगुली, कलाई, कान आदि शरीर के किसी अंग में पहनकर यह मानता था कि मैंने 'हिरण्य' धारण कर लिया। पर आज मुझे ज्ञात हो गया है कि असली हिरण्य तो ज्योति या तेज है, जिसे अंग–अंग में धारण कर लने से मनुष्य अत्यन्त शक्तिशाली हो जाता है। शरीर के एक बहुमूल्य तत्त्व 'वीर्य' को भी शास्त्रकारों ने 'हिरण्य' कहा है। इस 'वीर्य' या 'रेतस्' को अनावश्यक रूप से प्रस्खलित न कर शरीर में धारण कर लेना एंव 'उर्ध्वरेताः' बन जाना ज्योति या तेज की प्राप्ति का एक सफल उपाय है। यह ज्योति, तेज और वीर्य रूप हिरण्य का धारण दीर्घ एवं उत्तम आयु को देनेवाला है, ब्रह्मवर्चस को प्राप्त करनेवाला है, भौतिक तथा आध्यात्मिक ऐश्वर्य की पुष्टि को देनेवाला है। यह 'औद्भिद' है, बीज का अंकुर जैसे भूमि की परत को फाड़कर ऊपर आ जाता है, वैसे ही यह सब प्रकार की भौतिक और मानसिक रूकावटों को, विविध दुःखों और पीड़ाओं को एवं बाह्य और आन्तरिक रिपुओं को उद्भिन्न करके उत्कर्ष की ओर ले जानेवाला है। यह 'हिरण्य' मेरे अन्दर प्रवेश करे, प्रचुरता और तीव्रता के साथ प्रवेश करे।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

दो रास्ते

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

महात्मा आनंदस्वामी जी द्वारा लिखित 'तत्त्वज्ञान' नामक पुस्तक का आनंद आपने लिया। स्वामीजी की एक अन्य पुस्तक 'दो रास्ते' हम इस अंक से आरम्भ कर रहे हैं। रास्ते सदा से ही दो हैं—एक दुनिया का और दूसरा धर्म का। यजुर्वेद इन्हें ही 'अविद्या और 'विद्या', 'विनाश और 'संभूति, 'मृत्यु और अमृत' कहता है। कठोपनिषद् इन्हें 'प्रेयमार्ग और श्रेयमार्ग' कहता है। वेद, उपनिषद् की इन तात्विक बातों को अपनी मधुर और विशिष्ट शैली में महात्मा आनंदस्वामी ने एक कथा के रूप में सुनाया था जो आर्यसमाज, करोल बाग, दिल्ली, में उन्होंने की थी। लाखों लोगों ने इन कथाओं से लाभ उठाया है, शान्ति व अमृत पाया है, जो सांसारिक पदार्थों में निहित नहीं है।

मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक को पढ़कर आपको भी वही मार्ग मिलेगा जो एकमात्र अमृतमय और कल्याणकारी मार्ग है।

—सम्पादक.

'पहला दिन'

ओ३म् असतो मा सद्गमय,
तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मा अमृतं गमय !

हे महाशक्ति !

हे प्यारभरी, कृपाभरी, करूणाभरी माँ ! झूठ से हमें सचाई की ओर ले चल, घने अँधेरे से जगमगाते प्रकाश की ओर ले चल !

तू ही कृपा करनेवाली है माँ !

तू ही ऐसा कर सकती है, तू परम शक्ति और महाशक्ति है।

तू परम कृपा और महाकरुणा है।

अनन्त प्रवाह की भाँति तेरा प्यार आगे बढ़ता है।

सबकी झोलियाँ भर देता है।

परन्तु हम क्या करें माँ !

हमारी झोली फट गई।

तू इसमें जो कुछ डालती है, वह नीचे गिर जाता है।

हमारी यह झोली सी दे !

ताकि हम देखें कि तेरी सच्चाई, तेरा प्रकाश, तेरा अमृत एक अथाह और अनन्त सागर बनकर हमारे चारों ओर उमड़ता है, गाता है, लहराता है।

मेरी प्यारी माताओ और सज्जनो !

यह आर्यसमाज करोलबाग बहुत उस्ताद (चतुर) हैं। मैं अफ्रीका गया, वहाँ से खूब बीमार होके वापस आया; उपचार के लिए हैदराबाद चला गया। अच्छा हुआ, तो करोलबाग आर्यसमाज के अधिकारियों ने कहा, "हमारे मन्दिर में कथा करो !" मैंने मान लिया। उन्हें कहा कि मेरी कथा का विषय होगा – एक ही रास्ता ! यह भी कहा कि कुछ दूसरे स्थानों पर जाने का वचन दे रखा है, मैं वहाँ से वापस आकर अमुक तिथि से आपके यहाँ कथा करूँगा। वह तिथि आ गई। मैं दिल्ली में आया तो देखा, दीवारों पर बड़े–बड़े अक्षरों में लिखा है– एक ही रास्ता। मैंने समझा यह सब विज्ञापन आर्यसमाज करोलबाग ने लगवाए हैं। यह भी सोचा कि बहुत धन व्यय कर दिया है उन्होंने। यहाँ कथा करने के लिए पहुँचा तो पता चला कि वे विज्ञापन मेरी कथा के नहीं, अपितु एक फिल्म के हैं, जिसका नाम है 'एक ही रास्ता'। मैंने कहाहत्तेरे की ! यह तो बात ही कुछ और निकल आई।

और इस बार मैं यहाँ करने आया तो सोचा कि कथा का विषय होगा 'दो रास्ते' और दिल्ली आकर देखा कि यहाँ एक फिल्म लग रही है, जिसका नाम 'दो रास्ते' है। पैसा फ़िल्मवालों का व्यय होता है, विज्ञापन आर्यसमाज करोलबाग में होनेवाली कथा का हो जाता है।

परन्तु ये दो रास्ते क्या हैं ?

एक पथिक जा रहा था एक सड़क पर। चलता गया, चलता गया, चलता गया। एक दोराहे पर पहुँचा, वहाँ सड़क दो भागों में फटकर आगे जाती थी। एक रास्ता बाईं ओर, दूसरा दाईं ओर।

पथिक चकित कि अब जाऊँ किधर ? बाईं ओर या दाईं ओर।

बाईं ओर की सड़क को देखा – पक्की सीमेंट की सड़क, बहुत सुन्दर

और दिलकश। दोनों ओर फूल खिले थे। संगमरमर के बने बड़े–बड़े गमलों से रंगारंग के फूल इस प्रकार बाहर झाँक रहे थे जैसे किसी बहुत चतुर माली ने गुलदस्ते सजा दिये हों। बाजे बज रहे थे, शहनाइयाँ गूँज रही थीं, फिल्मी गीत हो रहे थे, दिल को लुभानेवाले गीत ! सुन्दर स्त्रियाँ स्वागत करती हुई खड़ी थीं। उनमें कुछ मस्त होकर नाच भी रही थीं। रंगारंग के प्रकाश में फव्वारे उछल रहे थे। बोतलें खुल रही थीं। अनेक प्रकार के स्वादिष्ट खाने मेज़ों पर पड़े थे। नाइट क्लबें भी थीं, सिनेमा–शो भी थे, हर प्रकार की वस्तुएँ थीं जो मनुष्य के दिल को अपनी ओर खींचती हैं।

पथिक ने यह सब–कुछ देखा तो उसका मन भी मचल उठा। दिल–ही–दिल में उसने निर्णय किया, यह अच्छा रास्ता है, आगे बढ़कर उस रास्ते पर चलना शुरू करे। तभी रास्ते के एक ओर लगे बोर्ड पर उसकी दृष्टि पड़ी। उसपर लिखा था – 'यह रास्ता सर्वनाश की ओर जाता है।'

पथिक चौंका, पीछे हटा, दाईं ओर की सड़क को देखा – कच्ची, ऊबड़–खाबड़–सी सड़क, कहीं टीले, कहीं गढ़े, प्रकाश है नहीं, धूल बहुत, स्थान–स्थान पर काँटेदार झाड़ियाँ, स्थान–स्थान पर नुकीले कंकर और भयानक चट्टानें।

मुसाफ़िर ने दिल–ही–दिल में सोचा – यह सड़क है या मुसीबत ? परन्तु तभी सड़क के किनारे लगे बोर्ड को देखा। उसपर लिखा था, 'यह परम आनन्द का रास्ता है।'

उपनिषदों की भाषा में इन दोनों रास्तों को 'प्रेय मार्ग' और 'श्रेय मार्ग' कहा जाता है; अर्थात् प्यारा मार्ग और कल्याणकारी मार्ग। एक ऐसा रास्ता जो अच्छा लगता है, दूसरा ऐसा जो अच्छाई की ओर ले जाता है।

नचिकेता महर्षि यम के पास गया तो ये दोनों रास्ते उसके लिए खुले थे।

नचिकेता के पिता महाराज 'वाजश्रवा' ने एक बहुत बड़ा यज्ञ किया, बहुत–कुछ उसमें दान दिया। ब्राह्मणों को गौएँ दान करने का समय आया तो महाराज ने जहाँ कुछ अच्छी गौएँ दान कीं, वहाँ कंजूसी के कारण कुछ ऐसी गौएँ भी दान में दे दीं जो बूढ़ी हो चुकी थीं, जिनका दूध समाप्त हो चुका था, जिनके दाँत हिल चुके थे, जो घास भी नहीं खा सकती थीं, जिनका अंग–अंग शिथिल हो गया था। नचिकेता ने इन गौओं को देखा तो उसे दुःख हुआ कि यह कैसा दान है ?

दुःख के साथ वह अपने पिता के पास गया; बोला – "मुझे किसको दान में देंगे आप ?"

वाजश्रवा ने उसकी घृष्टता को समझा; क्रोध के साथ कहा– "जा ! तुझे यम को दान देता हूँ, चला जा उसी के पास !"

आजकल की भाषा में कहना हो तो वाजश्रवा ने कहा – 'जा, मेरी आँखों से दूर हो जा !

परन्तु वह दूसरा जमाना (समय) था। नचिकेता उसी समय उधर चला गया जहाँ यम रहते थे। उनके घर पर पहुँचा। यम उस समय घर पर नहीं थे। नचिकेता उनके द्वार पर ही बैठ गया। तीन दिन वहाँ बैठा रहा, तीन रातें; कुछ खाया नहीं, पिया नहीं, क्योंकि किसी ने उसे खाने पीने को दिया नहीं। यही सोचता रहा वह – 'दुनिया में अरबों–खरबों लोग रहते हैं। उनमें अरबों मेरे जैसे हैं। अरबों मुझसे श्रेष्ठ है और अरबों मुझसे बुरे। मृत्यु का प्रबन्ध करने वाले यमदेव मुझसे कैसा व्यवहार करेंगे ?, इसके साथ ही उसने सोचा – 'कैसा भी करें, मृत्यु तो अवश्यम्भावी है। अनाज की तरह लोग पैदा होते हैं, अनाज की तरह पकते हैं, बूढ़े होते हैं, मरते हैं, अनाज की तरह फिर नया रूप धारण करके–जाग उठते हैं। मरना तो है ही ! फिर मरने से डरना क्या ?'

और तीन रातों के बाद चौथे दिन की प्रातः यम महाराज अपने घर पर आए तो देखा कि एक अतिथि घर के बाहर बैठा है। यह भी समझा कि तीन दिन का भूखा है, प्यासा है। किसी ने उसका स्वागत नहीं किया। मन–ही–मन उन्होंने सोचा, यह तो बहुत अनर्थ हो गया । किसी के घर अतिथि आए और वह भूखा बैठा रहे, उसका स्वागत न हो, उसे खाने–पीने को न दिया जाय, तो यह पाप घरवाले के सभी पुण्य कर्मों को समाप्त कर देता है।

ऐसा सोचकर यम महाराज आगे बढ़े; बोले – ''नचिकेता ! तुम तीन दिन मेरे द्वार पर भूखे बैठे रहे, तीन वर माँगो मुझसे ! जो भी तुम माँगोगे वह मैं दूंगा।"

नचिकेता ने सिर झुका के कहा – "मेरे पिता मुझसे अप्रसन्न हो गए हैं, ऐसी कृपा कीजिए कि उनकी अप्रसन्नता दूर हो जाए।"

यम महाराज बोले – "ऐसा ही होगा, दूसरा वर माँगो !"

नचिकेता के पिता महाराज 'वाजश्रवा' ने एक बहुत बड़ा यज्ञ किया, बहुत–कुछ उसमें दान दिया। ब्राह्मणों को गौएँ दान करने का समय आया तो महाराज ने जहाँ कुछ अच्छी गौएँ दान कीं, वहाँ कंजूसी के कारण कुछ ऐसी गौएँ भी दान में दे दीं जो बूढ़ी हो चुकी थीं, जिनका दूध समाप्त हो चुका था, जिनके दाँत हिल चुके थे, जो घास भी नहीं खा सकती थीं, जिनका अंग–अंग शिथिल हो गया था। नचिकेता ने इन गौओं को देखा तो उसे दुःख हुआ कि यह कैसा दान है ?

नचिकेता ने दूसरा वर माँगते हुए पूछा–"स्वर्ग और मुक्ति को प्राप्त करने का मार्ग क्या है ?"

यम ने वह मार्ग उसे बताया, उस यज्ञ की विधि बताई जिससे स्वर्ग और मुक्ति प्राप्त होते हैं। यह भी कहा – "आज से इस यज्ञ का नाम नचिकेता–यज्ञ होगा। अब तीसरा वर माँगो !"

नचिकेता ने कहा–"यम महर्षि ! मेरी तीसरी प्रार्थना आत्मा के सम्बन्ध में है। कुछ लोग कहते हैं कि आत्मा है। दूसरे कहते हैं कि नहीं है। आप बताइए कि वास्तविकता क्या है ? आत्मा क्या है ?"

यम ने प्रार्थना सुनी तो आश्चर्य से बोले – "यह क्या माँगता है तू ? इस बात को छोड़ ! मैं तुझे बहुत आयु दे सकता हूँ, संसार के सारे सुख दे सकता हूँ, सोने और चाँदी के भण्डार दे सकता हूँ, दौलत के अम्बार (ढेर) दे सकता हूँ, सुन्दर स्त्रियाँ दे सकता हूँ, तेरे लिए नाच–गाने की दिलकश (हृदय लुभाने वाली) दुनिया पैदा कर सकता हूँ, तुझे सारी पृथ्वी का चक्रवर्ती राज दे सकता हूँ, यह माँग मुझसे।"

नचिकेता ने कहा – "यह सब मुझे नहीं चाहिए, यम महर्षि ! इनसे आदमी की मुक्ती कभी होती नहीं। दौलत (धन) से इन्सान को शान्ति कभी मिलती नहीं। उसकी प्यास बुझती नहीं। चक्रवर्ती राजा बन जाय, सोने और चाँदी के पहाड़ इकट्ठे कर ले, हीरों और मोतियों से खजाने (कोष) भर ले, सुन्दर स्त्रियों से महल भर ले, तो भी एक दिन यह सब समाप्त होता है, मनुष्य खाली हाथ चला जाता है। यह सब कुछ नाश होने वाला है, मुझे इसकी इच्छा नहीं। आप मुझे आत्मा की बात सुनाइए।"

और गलत नहीं कहा नचिकेता ने। मैं अभी अमेरिका होकर आया हूँ। वहाँ करोड़पति बहुत हैं। पीटरबर्ग में ऐसे कई करोड़पति एक जगह एकत्र थे। उनमें से एक सज्जन ऐसे थे जो लन्दन से न्यूयॉर्क तक मेरे साथ सफ़र करते रहे। रास्ते में बातें करते रहे; मेरे परिचित बन गए। उन्हें पता था कि मैं भी पीटरबर्ग में हूँ। उन्होंने मुझे टेलीफोन करके अपने जलसे में बुलाया। मैं गया तो उस व्यक्ति ने मुझे कहा – "हमारे पास धन–दौलत की कमी नहीं। उसे कैसे खाना, कैसे बढ़ाना है, यह हम जानते हैं। परन्तु फिर भी, हमारे दिलों में शान्ति नहीं। हर समय एक तनाव मस्तिष्क में है। सारे अमेरिका में यह तनाव है। दिन को चैन नहीं मिलता, रात को नींद नहीं आती। सुख और शान्ति किसे कहते हैं, यह हमें पता नहीं।"

मैंने कहा – "ओ भाई ! इतनी सम्पत्ति है आपके पास, फिर भी आपके मन में शान्ति क्यों नहीं ?"

वे सज्जन बोले – "यही पूछने के लिए तो आपको बुलाया है।"

मैंने कहा – "मुझसे पूछते हो तो सुनो ! तुम्हारी दौलत ही तुम्हारी अशान्ति का कारण है। बन्द कर दो अपने कारखाने, त्याग दो अपनी दौलत। निर्धन हो जाओ तो वह शान्ति मिल जाएगी, जिसकी तुम्हें तलाश है। धन और दौलत में शान्ति है नहीं।"

और यम ने जब देखा कि नचिकेता किसी लोभ में नहीं आता, तो बोले– "सुनो नचिकेता ! दो रास्ते हैं – एक श्रेय मार्ग है, कल्याण का रास्ता; दूसरा प्रेय मार्ग है, प्यारा लगने वाला रास्ता, अच्छा लगने वाला रास्ता। एक रास्ता वह है जिसकी सड़क ऊबड़–खाबड़ है, टीलों और गढ़ों से भरपूर, जहाँ विपदाएँ हैं, कष्ट हैं, जहाँ कोई सजावट नहीं। दूसरा रास्ता वह है, जहाँ हर प्रकार के मनमोहक सामान हैं।" और यम महाराज ने कहा –

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ, संपरीत्य विविनक्ति धीरः।

श्रेयो हि धीरो अभिप्रेयसो वृणीते, प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीते ।।

कठोपनिषद् 2।1 ।2 ।।

"सुनो नचिकेता ! दो रास्ते हैं, श्रेय और प्रेय। एक वह जो कल्याण करने वाला है, दूसरा वह जो अच्छा लगने वाला है। दोनों मनुष्य के सामने आते हैं। जो बुद्धिमान् हैं, जिनके पास सूझ–बूझ है, समझ है, वे श्रेय मार्ग को, कल्याण करनेवाले रास्ते को अपनाकर उसपर चलना आरम्भ कर देते हैं।"

यह है 'श्रेय मार्ग' और 'प्रेय मार्ग' !

और आज की दुनिया में सब लोग 'प्रेय मार्ग' को अपनाकर दौड़े चले जाते हैं। शायद ही कहीं कोई श्रेय मार्ग को अपनाकर, दुःखों और कष्टों को तप की भावना से सहता हुआ इसपर चलता है, नहीं तो सब लोग प्रेय मार्ग पर चले जाते हैं। सारी दुनिया घूमकर देखिये, हर जगह आपको यही बात दिखाई देगी। अपने आस–पास देखिए, यहाँ भी यही बात नज़र आती है। सभी यात्री इसी रास्ते पर ही जा रहे हैं।

– क्रमशः

रंग-भेद आदि भेदभाव एवं वैदिक धर्म

● मनमोहन कुमार आर्य

यह संसार जिसमें सूर्य, चन्द्र, पृथिवी, अग्नि, वायु, जल, आकाश आदि नाना प्रकार के भौतिक पदार्थ हैं, ये सदा से बने हुए नहीं हैं, कभी न कभी ये बने या बनाये गये हैं। मनुष्यों द्वारा तो इन्हें बनाया ही नहीं जा सकता। विचार, चिन्तन, अध्ययन व वैदिक ग्रन्थों के अनुसार यह ब्रह्माण्ड सर्वत्र विद्यमान एक सर्वव्यापक, सर्वज्ञ व सर्वशक्तिमान चेतन सत्ता के द्वारा बनाया हुआ सिद्ध होता है। इस संसार की रचना का तर्क व बुद्धिसंगत उत्तर हमें वेद एवं वैदिक साहित्य में विस्तार से मिलता है। इस भौतिक जगत में मनुष्य के साथ ही पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि जैविक सृष्टि भी विद्यमान है जिन्हें यद्यपि माता-पिता जन्म देते हैं परन्तु सबके शरीरों का निर्माण उसी सर्वव्यापक चेतन तत्व अर्थात् ईश्वर के द्वारा होता है। हमारी यह पृथिवी अति विस्तृत है। इसका व्यास 12,700 किमी. है, परिधि लगभग 40,075 किमी. तथा इसका क्षेत्रफल 5,10,065 वर्ग किमी. है। अब यह मानकर कि यह संसार ईश्वर ने बनाया है तो उसका इसे बनाने का प्रयोजन क्या था, इसका ज्ञान होना आवश्यक है। ईश्वर ने यह संसार इसलिए बनाया है कि वह इसे बना सकता है और इसे चला सकता है जैसा कि यह सदियों से चला आ रहा है। यदि वह न बनाता तो उस पर अज्ञानी, सामर्थ्यहीन व निष्क्रिय होने का आरोप लगता तथा उसके द्वारा बना दिये जाने के कारण अब, ज्ञानी व अल्पज्ञानी, कोई आरोप नहीं लगा सकते।

जब कोई रचना की जाती है तो उसका प्रयोजन भी अवश्य होना चाहिये। इसका भी उत्तर वेद एवं वैदिक साहित्य से मिलता है जो बताते हैं कि **इस संसार में तीन सत्ताओं में से एक सर्वव्यापक चेतन सत्ता 'ईश्वर' है एवं अन्य दो सत्तायें जीवात्मा व प्रकृति हैं।** जीवात्मा भी एक चेतन तत्व है जो अनादि, अजन्मा, अविनाशी, अमर, कर्म-फल व्यवस्था व जन्म-मृत्यु-मोक्ष के चक्र में फँसा हुआ, एकदेशी व अल्प परिमाण वाली सूक्ष्म व अदृश्य सत्ता है जिसका ज्ञान, बुद्धि व मन से प्रत्यक्ष रूप में अनुभव होता है। प्रकृति एक अति सूक्ष्म जड़ तत्व है। मूल प्रकृति सत्व, रज व तम गुणों की साम्यावस्था है जो परिमाण में अनन्त है व प्रलयावस्था में इस सारे ब्रह्माण्ड में फैली हुई होती है। प्रकृति का यदि परिमाण जानना हो तो यह समझना चाहिए कि सारे ब्रह्माण्ड में जितने भी जड़ पदार्थ है, उन सबके नष्ट होने पर, यहां तक की अणु, परमाणुओं के भी अस्तित्वहीन होने पर जो ऊर्जा रूपी कण बचेंगे उनसे ही सारे ब्रह्माण्ड का निर्माण हुआ है और यह ऊर्जारूपी समग्र प्रकृति ही इस संसार का आदि कारण व मूल परिमाण है। **जीवात्मायें चेतन होने के कारण ज्ञान, इच्छा व प्रयत्न गुणों वाली हैं एवं हमारे ज्ञान के अनुसार संख्या में अनन्त तथा ईश्वर के ज्ञान में इनकी संख्या सीमित है।** जीवात्मा के ज्ञान, इच्छा व प्रयत्न गुणों को प्रत्यक्ष अथवा व्यवहार में लाने के लिए इसे मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट अथवा पतंग आदि किसी योनि में शरीर सहित अवस्था में होना आवश्यक है। जन्म धारण से पूर्व अथवा मृत्यु के पश्चात ये जीवात्मायें मूर्छित अवस्था में होती हैं। अब ईश्वर क्योंकि सर्वव्यापक एवं सर्वशक्तिमान चेतन सत्ता है, अतः उसका कर्तव्य व दायित्व है कि वह जीवात्माओं के लिए शरीरों की रचना करे। शरीरों की रचना से पूर्व इस सृष्टि को रचना अनिवार्य है अन्यथा मनुष्य के रूप में जीवात्मायें अपने शरीरों से ज्ञान, इच्छा व प्रयत्न गुणों का उपयोग व उपभोग नहीं कर सकेगीं। इस कारण ईश्वर को सृष्टि की रचना करनी होती है। ईश्वर में सृष्टि की रचना करने का ज्ञान व सामर्थ्य दोनों है। सृष्टि रचना के लिए उपादान कारण अर्थात् वह जड़ पदार्थ जिससे यह सृष्टि बनती है, की आवश्यकता है। सृष्टि के उपादान कारण की पूर्ति ईश्वर को मूल प्रकृति से प्राप्त रहती है। सृष्टि की रचना के लिए ईश्वर प्रकृति के अति सूक्ष्म कणों-सत्व, रज व तम्- से भिन्न-भिन्न प्रकार के परमाणु आदि बना कर उन्हें स्थूलाकार करता है और यह विकृतियां ही घनीभूत होकर सूर्य, चन्द्र, पृथिवी व पृथिवीस्थ सभी पदार्थ अग्नि, जल, वायु आदि के रूप में परिवर्तित की जाती हैं। वैदिक साहित्य में ईश्वर द्वारा सृष्टि रचना का वर्णन करते हुए बताया गया है कि सत्व, रज व तम की साम्य अवस्था के बाद पहला विकार महतवत्व का होता है, फिर अहंकार नामक तत्व या पदार्थ अस्तित्व में आता है, उससे पांच तन्मात्रायें, मन, बुद्धि, चित्त, पांच ज्ञान इन्द्रियां, पांच कर्मेन्दियां आदि बनती हैं जो ईश्वर द्वारा बनाई जाती हैं।

इससे पूर्व कि गोरा व काला के रंग-भेद की चर्चा करें, ईश्वर व जीवात्मा के यथार्थ व तर्कसंगत स्वरूप का उल्लेख करना भी आवश्यक है। ईश्वर का स्वरूप-सत्य,चित्त, आनन्दयुक्त, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तरयामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता आदि है। ईश्वर जीवात्माओं को पूर्व किए हुए कर्मो का फल देता है जो कि जाति (मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि), आयु एवं सुख-दुख रूपी भोगों के रूप में होता है। जीवात्मा अर्थात् हमारा स्वरूप **चेतनस्वरूप, एकदेशी, अल्प परिणाम, निराकार, अल्प शक्ति, अल्पज्ञ अर्थात् अल्प-सीमितकम-ज्ञान रखने वाला, अनादि, अजन्मा, अमर, ज्ञान के लिए माता-पिता-आचार्य-पुस्तकों सहित ध्यान व समाधि में परमात्मा से विद्या व ज्ञान प्राप्त करने वाला आदि स्वरूप होता है।** कर्मों को करना व फलों को भोगना भी इसका स्वरूप है। **इसी प्रकार प्रकृति एक जड़ पदार्थ है। कारण रूप में यह सत्व, रज व तम की साम्यावस्था के रूप में होती है और कार्य रूप में यह सूर्य, पृथिवी, चन्द्र, अग्नि, जल, वायु, आकाश और इस संपूर्ण ब्रह्माण्ड के रूप में होती है।**

अतः ईश्वर जीवों को उनके पूर्व जन्मों व कल्प-कल्पान्तरों में किए हुए कर्मो का फल देने के लिए यह सृष्टि रच कर उन्हें मनुष्य, पशु, पक्षी आदि योनियों में जन्म देता है। अच्छे व कम खराब कर्म वालों को मनुष्य जन्म व खराब व कम अच्छे कर्म करने वालों को पशु, पक्षी आदि निम्न योनियां मिलती हैं। अब मनुष्य जन्म का निर्धारण हो जाने पर भी सभी जीवों के कर्म समान नहीं होते अतः पूर्व किए हुए इन्हीं कर्मों के आधार पर माता-पिता, **रंग, रूप, देश व काल आदि का निर्धारण होता है। मनुष्यों में जो भिन्न-भिन्न आकृतियां, रंग व रूप मुख्यतः गोरा व काला, कद-काठी, सुन्दरता व कुरूपता, स्वास्थ्य आदि हैं वे हमारे पूर्व जन्मों के कर्मो व कुछ भौगोलिक कारणों से ही होते हैं।** ईश्वर के सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु आदि होने के कारण उसे इन बातों का निर्णय करने में कोई विशेष परिश्रम नहीं करना पड़ता और न ही समय लगता है। ऐसा समझना चाहिए कि ईश्वर के पास इसकी स्वचालित व्यवस्था है। **सांवले या काले रंग का होना कोई विशेष महत्व नहीं रखता। मुख्य बात तो मन व बुद्धि की पवित्रता, आचरण, व्यवहार, सदाचार-चरित्र आदि की है। जो अधिक ज्ञानी, सच्चरित्र, व स्वस्थ है वह काला, सांवला, असुंदर व कुरूप होकर भी गोरे रंग के अज्ञानी, निर्बल चरित्र, सुंदर व्यक्ति-स्त्री व पुरुष से कहीं अधिक महत्वपूर्ण व सम्मानीय है।** परंतु आजकल व्यवहार में ऐसा देखने में आता है कि गुणहीन गोरे रंग वालों को सांवले या काले रंग के व्यक्तियों से अधिक महत्व दिया जाता है और गुणवान सांवले व काले रंग के व्यक्तियों को गोरों से कम महत्व मिलता है। गोरे लोग काले लोगों को पंसद नहीं करते व कईयों के साथ ऐसा भी होता है कि गोरे लोग काले लोगों से दूरी बना कर रखते हैं **और वैवाहिक संबंधों में यह समस्या अधिक आती है।** इसी मनोविज्ञान के अनुसार समाज में भी गोरों को पंसद किया जाता है और काले लोगों की उपेक्षा हो जाती है। **यह हमारे समाज की अंध-धारणा या कूप-मण डूक मान्यता है, इसे बदलना होगा और इसके लिए हमें ज्ञान का सहारा लेना होगा।** इसके लिए विद्यालयों या स्कूल की पुस्तकों में पाठ दिए जा सकते हैं। **विद्यालयों व स्कूलों में अध्यापक बच्चों को इस पर विशेष रूप से पढ़ा व समझा सकते हैं कि वह जीवन में काले व गोरे का भेद न करें क्योंकि ऐसा करने वाले लोग ईश्वर के दण्ड के भी भागी होते हैं।** यह अच्छी बात है कि हमारे संविधान व कानून में मनुष्यों के गोरे व काले रंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाता। भेदभाव का अन्य कारण मानसिकता से भी जुड़ा है। क्योंकि हम लोग अंग्रेजों के गुलाम रहे हैं और अंग्रेजों के गोरा होने के कारण वे हम भारतीयों, जो काले, सांवले या कम गोरे होते थे व हैं, पर अत्याचार करते थे। अतः हमें भी उनसे यह मिथ्या धारणा या अंध-परंपरा विरासत में मिली जो हमारी मानसिकता में शामिल हो गई है **जिसे शिक्षा, ज्ञान व विवेक से दूर करना है।**

काले व गोरे रूप-रंग एवं भिन्न-भिन्न आकृतियां जिनमें लंबा, नाटा-पतला-दुबला, मोटा, सुंदर, कुरूप आदि होने के पीछे अन्य कई कारण स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। हमारी पृथिवी के सभी भागों पर लोग रहते हैं। कहीं सर्दी अधिक होती है तो

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका–धन का उपयोग ‘सत्कर्म’ में भी तो कर सकते हैं?

समाधान – ‘सत्कर्म’ में धन का उपयोग कर सकते हैं, परन्तु प्रायः करते नहीं हैं। कारण कि, पैसा हाथ में आते ही बुद्धि घूम जाती है।

वेद यह कहता है कि खूब धन कमाओ। पर केवल परीक्षण करने के लिए कि क्या धन से हमारी तृप्ति हो सकती है? धन ऐश्वर्य के स्वामी बनो। ऐसा इसलिए कहा गया है कि, मनुष्यों को यह शंका है कि धन मिला तो सब कुछ मिला। खूब धन कमाने से मनुष्य सुखी हो जाता है।

धन का परीक्षण करना चाहिए। यदि बहुत सा धन कमा कर भी वह सुख नहीं मिला, जिसकी कल्पना की थी तो परिणाम निकालो कि भोगों में सुख नहीं है। भोग–विलास में सुख एक है और दुःख चार हैं। इस परिणाम के आधार पर मोक्ष की तैयारी करो।

जब तक व्यक्ति इस संसार में भोगों से दुःख प्राप्त नहीं कर लेगा, भोगों से थक नहीं जाएगा, तब तक मोक्ष की इच्छा उत्पन्न नहीं हो सकती। वेद में धन कमाने और वैराग्य प्राप्त करने, इन दोनों बातों की चर्चा है। पर लोग वैराग्य को भूल जाते हैं, और धन कमाने की बात याद रखते हैं। जब भोग–विलास में सुख नहीं मिलता, तब वेद की दूसरी बात भी तो याद करनी चाहिए। और राजा भर्तृहरि व राजा जनक के समान वैराग्य ले लेना चाहिए। नचिकेता ने अपने पिछले जन्म में भोग किया, पर उसे सुख नहीं मिला। और जब वह अपने नचिकेता वाले जन्म में आया, तो गुरुजी ने उसे बहुत से प्रलोभन दिए, पर उसने कहा कि ‘धन से कोई तृप्त नहीं हुआ।’ अतः सार यह है कि–

धन उतना कमाओ, जिससे मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। इससे अधिक कमाएंगे, तो मोह–माया में फंस जाएंगे।

विदेशियों ने खूब धन कमाया, भोग किया, और अंत में सुख नहीं मिला तो वे भारत की ओर आने लगे कि यहाँ ऋषि–मुनि रहते हैं, और इन्हीं से सुख प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु भारत के लोग विदेशियों की नकल कर रहे हैं। वे भोग–विलास, धन–ऐश्वर्य के पीछे भाग रहे हैं, पर उनके परिणाम को नहीं देख रहे हैं। इस प्रकार, जिन लोगों ने संसार का सुख भोग लिया है, वे वैराग्य को प्राप्त करेंगे, और जिन्होंने अभी कुछ भोगा नहीं है, वे पहले भोगेंगे और फिर वैराग्य और मोक्ष को प्राप्त करेंगे।

शंका–ईश्वर सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान है, फिर ईश्वर ने ऐसा संसार क्यों नहीं बनाया, जिसमें केवल सुख ही होता, दुःख बिल्कुल न होता। भौतिक सुखों में दुःख क्यों है?

समाधान – संसार में सुख के साथ–साथ दुःख भी भोगने को मिलता है। कारण कि–

1. पहली बात– इसका एक कारण प्रकृति है। प्रकृति जो बेसिक मैटीरियल (मूल द्रव्य) है। प्रकृति से इस संसार को बनाया गया है।

प्रकृति के तीन पार्टिकल्स (अवयव–कण) हैं। एक है– सत्त्व गुण, दूसरा है–रजो गुण, तीसरा है– तमो गुण।

संसार को बनाने वाले इन तीनों कणों की प्रापर्टीज (विशेषताएँ) अलग–अलग हैं। सत्त्व गुण का स्वभाव है–सुख देना। रजो गुण का स्वभाव है–दुःख देना। तमो गुण का स्वभाव है– मूर्खता, पागलपन पैदा करना।

अब देखिए, प्रकृति रूपी मैटीरियल ही ऐसा है कि उसमें सुख भी मिलता है, दुःख भी मिलता है, और मूर्खता भी पैदा होती है। तो भगवान इसमें क्या करे? तीनों पार्टिकल्स में अच्छा केवल एक ही है–सत्त्व गुण। रजो गुण बेकार है, क्योंकि वो दुःख देता है। और तमोगुण भी बेकार है, क्योंकि वो पागलपन और नशा पैदा करता है। तीन कण में से दो तो खराब हैं, केवल एक ही अच्छा है। तैंतीस प्रतिशत मैटीरियल अच्छा है, षड़सठ प्रतिशत तो बेकार है। इसलिए उसमें दुःख तो मिलना ही मिलना है।

भगवान ने तो इतनी अच्छी कलाकारी दिखाई कि, इस बेकार मैटीरियल से इतनी बढ़िया दुनिया बना दी। ऐसी प्यारी दुनिया, कि अधिकांश लोग इस दुनिया को छोड़ने के लिए तैयार ही नहीं हैं।

भगवान ने इतनी अच्छी दुनिया बना कर कह दियाः– तुमको संसार का सुख लेना हो, ले लो। जब तक इसमें दुःख समझ में नहीं आए, तब तक संसार का सुख भोगो। और जब समझ में आ जाए, तब इसको छोड़ देना। फिर मेरे पास आ जाना। मैं मोक्ष का बढ़िया आनन्द दे दूँगा।

2. दूसरी बात– भौतिक सुखों में दुःख होने का दूसरा कारण हमारे कर्म हैं। हमने ‘सकाम कर्म’ किये। ‘सकाम कर्म’ अर्थात् सांसारिक सुख को लक्ष्य बनाकर अच्छे और बुरे कर्म किये। जब हमारे कर्म ही अच्छे और बुरे हैं, तो फल भी दोनों (सुख व दुःख) ही होंगे। केवल सुख फल कैसे हो सकता है? इसलिए संसार में सुख के साथ–साथ दुःख भी मिलता है। यदि केवल सुख चाहिए, तो मोक्ष में जाओ। वहाँ केवल सुख मिलता है।

3. तीसरी बात– यदि आप कहते हैं कि, ईश्वर सर्वशक्तिमान् है, वो ऐसा संसार बना दे, जिसमें दुःख हो ही न। इसका उत्तर यह है कि, सर्वशक्तिमान् का अर्थ यह नहीं कि ईश्वर नियम के विरुद्ध, जो चाहे सो कर दे। यदि आप ऐसा मानते हैं कि ईश्वर जो चाहे, सो कर सकता है, तो मैं आपसे पूछता हूँ कि, क्या ईश्वर बिना प्रकृति (उपादान कारण) के भी जगत् को बना सकता है? नहीं।

जैसे ईश्वर बिना प्रकृति के जगत् को नहीं बना सकता। ऐसे ही वह प्रकृति की विशेषताओं (सत्त्व–सुख देना, रज–दुःख देना, तम–नशा उत्पन्न करना आदि) को भी नहीं बदल सकता। इसीलिए वह दुःख रहित, केवल सुखमय, संसार को नहीं बना सकता।

कन्या भ्रूण हत्या एक ऐसा पाप है जिसका कोई प्रायश्चित नहीं

● कामता प्रसाद आर्य

समाज में स्त्री–पुरुष राष्ट्र का एक अंग है विकास का एक महत्त्वपूर्ण सूचक है। नर तथा नारी किसी एक के कमी होने पर सृष्टि का कार्य नहीं चल सकता। महामहिम पूर्व राष्ट्रपति श्री अब्दुल कलाम ने अपनी वेदना व्यक्त करते हुए कहा है– ‘‘समाज एक पक्षी है और नर तथा मादा इस पक्षी के दो पंख हैं। यह पक्षी उड़ नहीं सकेगा यदि उसका एक पंख कतर दिया जाता है।’’ आज हमारे देश में यह जघन्य अपराध हो रहा है। प्रसवपूर्व निदान तकनीकि चिकित्सा तंत्र की महत्वपूर्ण खोज है, किन्तु यह खोज लिंग जाँच का एक अपवित्र साधन बन गई है। यही कारण है कि भारतीय संसद को इस दुरुपयोग पर रोक लगाने हेतु प्रसवपूर्व निदान तकनीकि (विनियमन और दुरुपयोग निवारण) अधिनियम 1994 पारित करना पड़ा। यह अधिनियम सम्पूर्ण देश में 1 जनवरी 1996 से निरन्तर लागू है। भारत सरकार ने उक्त अधिनियम में आवश्यक संशोधन करके दिनांक 04.02.2003 से गर्भधारण से पूर्व और प्रसव पूर्व निदान तकनीक (लिंग चयन प्रतिषेध) अधिनियम 1994 रखा।

गर्भधारण पूर्व और प्रसवपूर्व निदान तकनीकि (लिंग चयन प्रतिषेध) अधिनियम 1994 के अन्तर्गत गर्भ धारणपूर्व या बाद लिंग चयन और जन्म से पहले कन्या भ्रूण हत्या के लिए लिंग परीक्षण करना, करवाना, इसके लिए सहयोग देना व विज्ञापन करवाना कानूनी अपराध है, जिसमें उसे 5 वर्ष तक जेल व 10 हजार से 1 लाख रुपये तक जुर्माना हो सकता है।

सरकार द्वारा कानून बना दिया गया। क्यों सरकार कानून बनाने तक ही सीमित है। घोर अपराध हो रहा है, फिर भी सरकार के खुफिया तंत्र निष्क्रिय एवं अनजान हैं।

मानवता के नाते सोचें कि भ्रूण हत्या करना–करवाना मनुष्यवृत्ति है या निशाचरी प्रवृत्ति अजन्मा भ्रूण जो अभी विकसित भी नहीं हो पाया हो उसने क्या अपराध किया है? जिसे जन्म से पहले माँ के गर्भ में मार दिया जाता है। अतः मानव समाज से निवेदन है कि अपने निजी स्वार्थ से हटकर सोंचे कि हम क्या कर रहे हैं, इस कर्म से राष्ट्र का भविष्य क्या होगा?

सिर्फ कानून बनाना सर्वोपरि नहीं है, कानून का पालन करना सर्वोपरि है। नैतिक चरित्रता के अभाव में दुष्कर्म हो रहा है, प्रमुख रूप से तीन जिम्मेवार हैं सृष्टि सन्तुलन को बरबाद करने वाले, एक गर्भवती का परिवार दूसरा डाक्टर, तीसरा कानून का रक्षक प्रशासन सरकार जब तक यह तीनों मानव धर्म नहीं, निभाएगे तब तक यह शर्मनाक दुष्कर्म होता रहेगा, सृष्टि का सन्तुलन बिगड़ता ही रहेगा। यदि सच में मानव है तो सत्य को अपनाने में, असत्य को छोड़ने में ही मानव धर्म है।

असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय

आर्य समाज
आदा भोजपुर, बिहार

☞ पृष्ठ 04 का शेष

रंग–भेद आदि...

कहीं गर्मी अधिक होती है। कहीं वर्षा अधिक होती है तो कहीं बिलकुल ही नहीं होती। कहीं उर्वरा भूमि है तो कहीं रेगिस्तान जहां घास तक भी नहीं होती और वहां पशु पालन भी नहीं किया जा सकता; कहीं पहाड़ हैं तो कहीं मैदान। अतः भौगोलिक कारणों से भी मनुष्य गोरे व काले रंग के होते हैं। अन्य कारणों में लोगों के रहन–सहन, खान–पान, धार्मिक विचार, आचरण, सोच, श्रम, व्यायाम या परिश्रमपूर्ण जीवन भी कारण होता है। अफ्रीका में प्रायः निर्धन लोग जिनके पास अधिक साधन व सुख–सुविधाएं नहीं हैं, अधिक काले होते हैं। भारत की जलवायु शीतोष्ण होने के कारण यहां गोरे व काले तथा सभी कठ–काठी व रंग के लोग होते हैं। संतानों के गोरे व वाले रंग का होने का कारण प्रायः माता–पिता के अनुरूप होना भी है। यदि माता–पिता दोनों काले हैं तो संतान का काला होना प्रायः निश्चित होता है। गोरे माता–पिता की संतान गोरी ही होती है। **परंतु रंग का प्रभाव किसी भी रूप में व्यक्ति के गुणों, ज्ञान, सदाचार आदि व चारित्रिक विशेषताओं पर नहीं पड़ता है।** अतः शिक्षित लोगों को इन बातों का हमेशा ध्यान रखना चाहिए और यदि प्राथमिक शिक्षा में ही इस विषय को सम्मिलित कर लिया जाए तो इससे भावी पीढ़ियों की मानसिकता बदली जा सकती है।

गोरे रंग के व्यक्तियों द्वारा काले रंग के व्यक्तियों से यदा–कदा व यत्र–तत्र जो भेदभाव किया जाता है वह किसी भी प्रकार से उचित नहीं है। गोरे रंग के लोग स्वयं गोरे नहीं बने और इसी प्रकार काले रंग के व्यक्ति अपनी इच्छा से काले नहीं बने हैं। ईश्वर ने हम सबको बनाया है और इसके पीछे कारण हो सकते हैं जिसका ज्ञान केवल ईश्वर को ही हो सकता है। हमें तो बस अपने पूर्व किए हुए अच्छे व बुरे कर्मों का भोग करना है जो सुख या दुःख के रूप में हमें मिलते रहते हैं। अच्छे कर्मों के आधार पर हमें जो सुख–सुविधाएं प्राप्त हुई हैं उनका उपभोग केवल स्वयं के सुख–पूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए ही न करें। सुख भोग की इच्छा नहीं करनी चाहिए क्योंकि विवेचना से यह ज्ञात हुआ है कि प्रत्येक सुख के साथ चार प्रकार के दुःख यथा, परिणाम, ताप, संस्कार एवं गुणवृत्ति विरोध दुःख जड़े हुए हैं। हर सुख का परिणाम कुछ मात्रा में दुःख अवश्य ही होता है। हमने कई बार पढ़ा है कि लोगों ने शराब पी, वह जहरीली थी, उन्होंने सुख के लिए पी थी तथा परिणाम में उन्हें मृत्यु रूपी दुःख मिला। स्वादिष्ट भोजन भी यदि बिना परीक्षा किए करते हैं तो उससे भी दुःख मिलता है जैसे कि वह ठीक प्रकार से न बनाया गया हो। उसमें ऐसे पदार्थ हो सकते हैं जो हमारे शरीर व स्वास्थ्य के अनुकूल न हों और हो सकता है कि अपवादस्वरूप किसी परिस्थिति में उसमें कुछ विष व हानिकारक पदार्थ मिले हों जैसा कि आजकल व्यापारियों द्वारा स्वार्थपूर्ति के लिए खाद्य पदार्थों में मिलावट की जाती है व कृत्रिम दूध व इससे बने पदार्थ आदि बहुतायत में मिलते हैं। बाजार में प्राप्त होने वाले फल व सब्जियां भी रसायनों के प्रयोग से विष के समान ही प्रायः हैं। **मनुष्य जीवन का उद्देश्य सुख भोगना मात्र ही नहीं है अपितु दुःखों की पूर्ण निवृत्ति है, ऐसा विद्वान व ज्ञानी मानते हैं।** अतः गोरे लोगों द्वारा काले लोगों को अपना मित्र बनाकर, उन्हें पूरा सम्मान देकर, किसी प्रकार का अन्याय या पक्षपात न कर व उनके ज्ञान व उनके परिश्रम आदि गुणों की प्रशंसा कर व उनसे लाभ उठाकर अपने दुःख निवृत्ति के उद्देश्य को पूरा करने की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए। **यदि कोई रंग के आधार पर भेदभाव करता है तो यह निश्चित है कि वह अपने जीवन के प्रमुख लक्ष्य, दुःख निवृत्ति या बार–बार के जन्म–मरण से मुक्ति अथवा मोक्ष से दूर चला जाएगा, यह शास्त्रों की शिक्षा, अनुमान व शब्द प्रमाण से सिद्ध है।** अतः किसी को भी शरीर की त्वचा के रंग–गोरे या काले के आधार पर परस्पर भेदभाव कदापि नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसा करना ईश्वर व उसकी दया व कृपा से दूर होना है जिसकी सजा मिलेगी और हम अपने जीवन के उद्देश्य मोक्ष वा दुःखों की पूर्ण निवृत्ति से दूर हो जाएंगे। **ईश्वर चाहता है कि हम सुखों व मिथ्या आचरण का त्याग कर ईश्वर का ध्यान, चिंतन व परोपकारमय जीवन व्यतीत करें।** प्रत्येक स्त्री व पुरुष का यही कर्तव्य है कि वह इसी प्रकार से कर्तव्यों का निर्वाह करे। अतः मनुष्यों को रूप व रंग के आधार पर भेदभाव कदापि नहीं करना चाहिए, ऐसा करना अनुचित है और ऐसा करने वालों का जीवन व्यर्थ हो जाता है।

हम यहां संस्कारों का भी वर्णन करना चाहते हैं। शरीर–वैज्ञानिकों का कर्तव्य है कि वह अच्छी श्रेष्ठ संतान जो सुंदर, आकर्षक, बलवान, बुद्धिमान, चरित्रवान, ईश्वरभक्त, देशभक्त, माता–पिता–गुरुजनों की आज्ञाकारी, परोपकारी, दूसरों का दुःखहरण करने की भावना रखनेवाली हो, उसे कैसे बनाया जा सकता है, इसकी विधि व पद्धति की खेज करें। हमारे ऋषियों ने तो यह कार्य पहले ही किया हुआ है। इसके लिए उन्होंने हमें संस्कार विधि प्रदान की है। संस्कारवान संतान व भावी युवा पीढ़ी के लिए विवाह किस आयु में करें, भोजन कैसा करना चाहिए, शिक्षा–दीक्षा कैसी हो, संतान का लालन–पालन व पोषण किस प्रकार से हो, उनके आचार्य व गुरुजन किस प्रकार के हों, आध्यात्मिक विषयों का ज्ञान किस प्रकार से कराया जाए, एतद्–विषयक समस्त ज्ञान व उसका पालन तथा ईश्वरोपासना, योगाभ्यास व व्यायाम आदि का समावेश प्रत्येक माता–पिता–आचार्य व ब्रह्मचारी–विद्यार्थी के जीवन में हो तो संतान व भावी पीढ़ियां चरित्रवान व श्रेष्ठ आचार विचारों को धारण करने वाली होंगी। अच्छे संतान व नागरिकों के लिए माता–पिता व आचार्यों का श्रेष्ठ आचारवान् होना आवश्यक है। **प्राचीन काल में ऐसा ही होता था तभी ऋषि–मुनि, राम, कृष्ण, हनुमान, चाणक्य, दयानंद जैसी महान् आत्माएं इस धरती पर जन्म लेती थीं।** हमारी आजकल की शिक्षा प्रायः संस्कारविहीन शिक्षा है जिस कारण सामाजिक विषमताएं उत्पन्न हुई एवं प्रचलित हैं।

महाभारत काल, जो आज से लगभग 5200 वर्ष पूर्व है, के बाद अज्ञान व अव्यवस्था छा जाने के कारण, जन्म पर आधारित जातीय व्यवस्था, अनेक कुप्रथाएं, ऊंच–नीच की भावना आदि का प्रचलन हुआ जो आज भी विभिन्न रूपों में विद्यमान है। **अज्ञान के दूर होने व सत्शिक्षा के प्रचार–प्रसार व प्रशिक्षण से ही सभी सामाजिक बुराइयां दूर होंगी। इन्हें दूर करने के लिए वैदिक ज्ञान सर्वाधिक सहायक है। वैदिक संस्कारों से रंग–भेद एवं ऊंच–नीच की भावना को दूर किया जा सकता है और समाज में समरसता लायी जा सकती है।**

61/196 चुक्खूवाला–2,
देहरादून–248001

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आर्य समाज की आवश्कता

● अर्जुनदेव चड्ढा

सन् 1875 को महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मुम्बई की काकड़बाड़ी में आर्य समाज की स्थापना की। सामाजिक सुधारों के नवजागरण का पुरोधा आर्य समाज अपनी स्थापना से ही अपनी प्रासंगिकता बनाए हुए है। विगत उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में भारत में अनेक समाज सुधारक संस्थाओं का प्रादुर्भाव हुआ, किन्तु वे संस्थाएं समय के चक्र में काल कलवित हो कहां चली गईं बताना कठिन है, किन्तु आर्य समाज आज भी अपनी दस हजार से अधिक शाखाओं के साथ अडिग प्रहरी के समान दृढ़तापूर्वक खड़ा होकर समाज का पथ प्रशस्त कर रहा है।

इन सबका कारण है आर्य समाज के अपने विश्वव्यापी वे सिद्धान्त जो इसकी स्थापना के साथ ही इसके संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इसे प्रदान किये। जो तेजी से बदलते आज के युग में उतने ही प्रासंगिक हैं जितने विगत शताब्दियों में रहे हैं। समाज में व्याप्त अन्याय, अभाव, अंधकार का प्रशमन ही आर्य समाज की कार्य योजना है।

यद्यपि इक्कीसवीं सदी में शिक्षा और विज्ञान ने मानव जीवन में आमूलचूल परिवर्तन कर दिया फिर भी वह अपनी परम्परागत रूढ़ियों, कुरीतियों तथा सामाजिक अंधविश्वासों से पृथक नहीं हो पाया है, तकनीक ने इसके बाह्य स्वरूप को तो बदल दिया किन्तु आन्तरिक आत्मा का विकास अभी भी अधूरा है।

समाज में व्याप्त अन्याय, अनाचार, भ्रष्टाचार, आडम्बर, असमानता, अस्पृश्यता, अनैतिकता आज भी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा शैक्षिक विसंगतियों की चादर ओढ़े मानव मात्र का नित नयी विधियों से शारारिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक शोषण कर रही हैं।

धर्म का वर्तमान स्वरूप मनुष्य जाति को जोड़ने की जगह तोड़ने का कार्य कर रहा हैं। वसुधैव कुटुम्बकम् का वर्तमान नारा केवल व्यापार को बढ़ावा देने तक सीमित हो गया है। समाज समाज न रहकर व्यापारिक मण्डी हो गई जहां दबी कुचली मानवता विभिन्न रूपों में बिके जा रही है।

इन सबका कारण है सबको समभाव

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

जीवन की वैदिक व्यवस्था

● डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह

वेद में जीवन जीने की सुन्दर व्यवस्था का प्रकाश किया है जो ईश्वर कृत है। यह जीवन जीने की कला देखें तो अनुभव करेंगे कि सब कुछ विधिवत अर्थात् सिस्टेमेटिक है। वाल्यावस्था में कविता पढ़ा करते थे – जिसने सूरज चांद बनाया जिसने तारों को चमकाया जिसने चिड़ियों को चहकाया.......'' यह सूर्य चन्द्रमा व पृथ्वी भूगोल जीव जगत् सब ईश्वर ने ही तो बनाया है। सूर्य निश्चित समय पर उदय व अस्त होता है ग्रह आदि सूर्य की निश्चित कक्षा में परिक्रमा करते हैं तारों का दिखाई देना सूर्य चन्द्रमा का अपना–अपना प्रकाश, पृथ्वी पर पर्वत, नदियां, सरिता व वनस्पति फल–फूल अन्न व औषधि, पृथ्वी के अन्दर हीरा मोती आदि सब ईश्वर की की ही देन है। यह सब एक व्यवस्था (सिस्टम) है। इसे चलाने वाला वही ईश्वर है जो सर्व शक्तिमान परमपिता परमेश्वर है। यह सृष्टि क्रम भी उसकी ही व्यवस्था है जो नियमित है।

मनुष्य का जीवन भी नियमित व व्यवस्थित है। वेदानुसार जीवन के चार भाग है। जिनमें ब्रह्मचर्या श्रम, ग्रहस्थाश्रम, वाणप्रस्थ व चौथा सन्यासाश्रम। अवस्था को ध्यान में रखते हुए ईश्वर ने इनका प्रकाश किया है। इससे सुख पूर्वक जीवन व्यतीत किया जा सकता है। वेद द्वारा जो जीवन जीने की व्यवस्था है वह पूर्ण वैज्ञानिक है। ब्रह्मचर्याश्रम जिसमें विद्या ग्रहण, शिक्षा प्राप्ति का काल होता है। प्राचीन काल में इसके लिए राजनियम था।

कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम्
– मनु.

राजा को योग्य है कि सब कन्या और लडकों को उक्त समय से उक्त समय तक ब्रह्मचर्य से रख के विद्वान कराना। जो कोई इस आज्ञा को न माने तो उसके माता–पिता को दण्ड देना अर्थात् राजा की आज्ञा से आठ वर्ष के पश्चात् लड़का वा लड़की किसी के घर में न रहने पावे किन्तु आचार्य कुल में रहे।

वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम्
अविप्लुत ब्रह्मचर्यो ग्रहस्थाश्रममाविशेत्
–मनु

जब ब्रह्मचर्य (यथावत) आचार्यानुकूल वर्त्तकर, धर्म में चारों तीन वा दो अथवा एक वेद को साङ्गोपाङ्ग पढ़ के जिसका ब्रह्मचर्य खण्डित न हुआ हो वह पुरुष वा स्त्री ग्रहाश्रम में प्रवेश करे। ब्रह्मचर्याश्रम के पश्चात् गृहस्थाश्रम तत्पश्चात वाणप्रस्थाश्रम और चौथा सन्यासाश्रम होता है।

यह जीवन के चारों सोपान हैं। जो नियमानुसार बनाए हैं। प्राचीन काल में इनका विधिवत पालन भी होता था। जिस प्रकार यह आश्रम व्यवस्था है मानव मात्र के सुख हेतु है उसी प्रकार वेदानुसार वर्ण व्यवस्था भी है। समाज को गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र इन चार में बांटा है। शतपथ में दिया है बाहुर्वैबलं बाहुर्वै वीर्यम् अर्थात् जो बलवान वीर्यवान हो क्षत्रिय, जो विद्वावान ज्ञान वान अधिक हो वह ब्राह्मण, कृषि पशु आदि के कार्य में जिसकी अधिक रुचि हो वैश्य और जो अशिक्षित हो सेवा कार्य में रुचि हो वह शूद्र। यह वर्ण व्यवस्था गुण कर्म व स्वभाव अनुसार है जन्म से नहीं। वैदिक काल में सर्वत्र प्रसन्नता थी। सभी धनधान्य से परिपूर्ण थे क्योंकि सभी अपने–अपने धर्म का पालन करते थे, कहीं कोई ईर्ष्या, द्वेष आदि न था।

जैसे वर्ण व आश्रम की व्यवस्था थी ठीक उसी प्रकार संस्कार की शिक्षा थी। समय पर किए जाने वाले संस्कारों से गुणों की वृद्धि होकर जीवन मधुर, उन्नतिशील बनता जाता है। संस्कारों से ही मानव का निर्माण होता है, बिना शिक्षा व संस्कार के मनुष्य पशु के समान होता है जैसे बोझ ढोने वाला गधा होता है। चर्ममय मृग होता है। जीवन में यदि उन्नति प्राप्त करणी है तो संस्कारों को समय पर करना होगा निषेक पुंसवन सीमन्तोपनयन आदि संस्कारों संस्कार विधि में विस्तृत प्रकाश किया गया है।

इसके पश्चात् वेदानुसार आर्यों के घरों में नित्य संध्या व अग्नि होत्र प्रातः सांय दोनों समय होते थे जिनमें अपना आत्मा मन पवित्र रहता था, वातावरण शुद्ध रहता था। कोई कहीं कैसा भी विकार न रहता था पृथ्वी के अन्दर, वर्षा का जल नदी सरिता का जल, कृषि औषधि सभी शुद्ध व पवित्र होते थे।

कहने का तात्पर्य यह है कि वेद में एक नियम पूर्वक विधान है, व्यवस्था (सिस्टम) है। ऐसा विधान जिसमें प्रत्येक मोड़ पर पिता की भांति जैसे कोई संरक्षक बताता रहता है अब ऐसा करो। अब ऐसा करो यह ज्ञान वेद में ही दिया है। अन्य कहीं भी नहीं, समाज के कार्य की व्यवस्था, मानव जीवन की व्यवस्था संस्कार जिनमें गुणों की वृद्धि होती रहे और फिर धर्म का ज्ञान केवल वेद में ही निहित है जिसे मानव मात्र की भलाई के लिए किया है, हमें यदि जीवन में उन्नति करनी है, समाज को श्रेष्ठ बनाना है। राष्ट्र का गौरव बढाना है तो वेद पढ़ने पढ़ाने चाहिए। वेद ज्ञान से ही संसार को श्रेष्ठ बना सकते हैं। वेद किसी विशेष भूगोल या वर्ग समुदाय हेतु नहीं हैं अपितु संसार का कोई भी व्यक्ति इन्हें पढ़ कर अपना जीवन श्रेष्ठ बना सकता है।

चन्द्र लोक कालोनी
खुर्जा, मो. 08979794715

मृत्यु–अधिष्टाता–ईश्वर

● सूरजमल त्यागी

हे मानव! तू इस जगत् में क्यों आया है? अपनी मर्जी से आया अथवा किसी ने भेजा है? यदि अपनी इच्छा से आया है, तो तेरे आने का क्या प्रयोजन है? क्योंकि अनेकों बार यहाँ आता–जाता रहा है। क्या पूर्व के जन्म में, यहाँ तेरा कुछ रह गया था? जिसे लेने–देने आया है। है। तू यह अच्छी तरह जानता है कि –अपने पूर्व जन्म के कर्म–फल भोग के लिए, मृत्यु के द्वारा ही जन्म–जीवन और मरण होता है। इसलिए उपनिषद् का ऋषि मृत्यु संस्कार में समझा रहा है।

वायु अनिलम् अमृतम् अथ इदं भस्मान्तं शरीरम्।
ओ३म् क्रतो स्मर, क्लिबे स्मर, कृतम् स्मर।।
(यजु.40–15)

शब्दार्थ – वायु=प्राणी, जीवात्मा। अनिल–अभौतिक। अमृतम्–अविनाशी। अथ–परन्तु। इदं–यह दिखाई देने वाला स्थूल शरीर। भस्मान्तरं–भस्म कर, राख करने के लिये है।

इस स्थूल शरीर की तीन गतियाँ हैं, जन्म–जीवन और मरण। इनसे कोई भी नकार नहीं कर सकता। मनुष्य अपनी मृत्यु की गति स्वयं तय करता है। मृत्यु के बाद कुछ लोग शव को जमीन में दफनाते हैं, कुछ पानी में बहा देते हैं, कुछ खुले में (डेथ बेड पर) रख देते हैं, हिन्दू अग्नि में भस्म कर राख कर देते हैं। शव की अन्तिम गति के लिये मुसलमान ईसाई, फारसी और वैदिकधर्मालम्बियों की पृथक–पृथक मान्यतायें हैं। परन्तु परमात्मा ने वेदानुसार शव की अन्तिम गति को अन्त्येष्टि संस्कार के नाम से प्रतिष्ठित किया है। शव को अग्नि में भस्म करने को इष्टियज्ञ की संज्ञा दी है। शव को सड़ने–गलने–प्रदूषित होने से बचाने के लिये, पंचभूतों के समन्वित–संयोग से बने, पंच भूतों को उनके मूल में विलीन–विलुप्त करने की यह वैज्ञानिक पद्धति सर्वश्रेष्ठ है। इन पंचदेवों को यथेष्ठ घी, सामग्री, कपूर, नारियल, चन्दन आदि से तृप्त, सन्तुष्ट किया जाता है। प्रत्येक हिन्दू अपने शव की अन्तेष्टि संस्कार की वसियत परिवार के लिये एक अनिवार्य कृतर्व्य के रुप में छोड़ जाता है। यह एक उच्च कोटि का वैदिक–वैज्ञानिक दर्शन है –जो आज विश्व में मान्य है।

सभी के लिये मृत्यु तो अत्यन्त भयावह, डरावनी ही नहीं, दुखदायी भी होती है। अपनी मेहनत, खून–पसीने से बनाये, संजोये–सजाये तथा पुत्र, पत्नी, पति, परिवार को छोड़ना, जिसे छोड़ना नहीं चाहता, छीनकर छुड़ाया जाना, कष्ट दायक है। मृत्यु से भी अधिक दुख तो, एकत्र की गई धन सम्पदा, कार–कोठी को छिनता देख कर होता है। मृतक तो चल बसता है, किन्तु परिवार जन तड़पते–बिलखते रह जाते हैं। उन सब पर तो विपत्ति का पहाड़ ही टूट पड़ता है। जो कल तक पड़ोसियों को ढाढ़स बँधा रहा था, आज स्वयं ही सफेद कपड़े में लिपटा हुआ चिर निन्द्रा में जमीन पर पड़ा है। किसी से कुछ भी नहीं बोलता। किसी की भी बात नहीं सुनता। परिवार में रुअंन–क्रन्दन, नैराश्य और अंधकार छाया हुआ है। वह हो गया, जो कभी सोचा भी न था। सबसे अपने सम्बन्ध विच्छेद कर अछूत हो गया, परिवार का प्यार–दुलार छिन गया। अपनों के मिलने वाले साधन, सुख–सुविधायें, रक्षण–पोषण समाप्त हो गया, परिवार में निराशा का साम्राज्य हो गया।

परमात्मा ने प्रत्येक समस्या के समाधान का वेद विधान किया है। जब हम विधाता की नियति, स्थिति, नियमों को बदल नहीं सकते, ऐसी स्थिति का सामना करने के अतिरिक्त उपाय नहीं है, ऐसी स्थिति से सामना नहीं कर सकते तो एक ही उपाय है कि सामना करने की सामर्थ्य के लिये एक ही ईश्वर की स्तुति–प्रार्थना–उपासना करें। ईश्वर ही शक्ति–सामर्थ्य, बुद्धि प्रदान कर सकता है। ईश्वरापासना का इतना बड़ा फल भी क्या कम है? परमात्मा उपदेश करता है।

ईशावास्यमिदं सर्वं, यत्किंच जगत्यां–जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गधः कस्य स्विद्धनम्।। (यजुर्वेद 40–1)

हे पुरुषार्थी–पुरुष! जो भी इस जगती में जगत् है इस सबका मालिक, स्वामी एक ही ईश्वर है। तू! जो कुछ भी खाता–पीता, देखता है यहाँ तक तेरा शरीर भी उसी का है। तुझे जो कुछ भी तेरे कर्म फल की पात्रता से मिला है, उसी से तृप्त और सन्तुष्ट होकर त्याग–वृत्ति से उपभोग से जीवन यापन कर। अन्यों के धन–दौलत, समृद्धि का लालच मत कर। परन्तु सर्वमान्य, इस शाश्वत सत्य को मानकर, व्यवहारगत, सदाचरण करना अत्यन्त

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

लाखों अनाड़ी 'नमाज' को समाज–धर्म मानने से बिना मौत मारे गए

● आचार्य आर्य नरेश

अज्ञान, जाति, धन, कोटा तथा कुर्सी के लोभ में, वेद–धर्म से दूर होकर असंख्य 'आर्यखालसा हिन्दू' मुस्लिम नमाज मजहब को भी धर्म मानकर मृत्यु के शिकार हुए। अजान द्वारा नमाज हेतु एकत्रित हुए मुसलमान क्या प्रार्थना करते हैं? क्या मुसलमानों की नमाजी इबादत धरती के लोगों से प्यार और उपकार हेतु है? यदि अजान और नमाज पूर्ण पृथ्वी के मानवों हेतु कल्याणकारी होती तो भारत सहित संसार भर के 'मुसलमान' यहूदी, ईसाई, अपने ही मुस्लिम भाई शियाओं, अहमदियों व असंख्य हिन्दुओं का कत्ल न तो करते एवं न ही अब कर रहे होते। कहते हैं कि चोर, डाकू, बदमाश पहले दूसरों को लूटते एवं गला काटते हैं परन्तु दूसरों के साथ–साथ आगे चलकर अपनों का भी गला काटने लगते हैं। जैसे कि आज कल पाकिस्तान, इराक, ईरान और अफगानिस्तान में शिया तथा सुन्नी एक दूसरे का ही गला काट रहे हैं। गांधी जी ने कुरआन को पढ़े बिना अपने घोर अज्ञान अथवा संगबुद्धि हेतु सदा हिन्दू–मुस्लिम भाई–भाई का व्यर्थ नारा लगाया, परन्तु फिर भी मुसलमानों ने हिन्दुओं को सदा एक गिरे हुए प्राणी के तुल्य काफिर संज्ञा देकर अपना शिकार बनाया। यदि किसी एक आदि मुसलमान ने किसी हिन्दू पर दया की तो इसलिए कि वह कुरआन के अनुसार एक सच्चा मुसलमान नहीं। न तो उसने कुरआन की आज्ञा मानी अथवा कुरआन पढ़ी ही नहीं अथवा कुरआन अथवा नमाज का अर्थ ही नहीं जाना। ऐसा नाम का मुसलमान यदि हिन्दुओं पर दया करता है तो इसका अर्थ यह न समझना चाहिए कि सभी अन्य मुसलमान भी आप पर दया करेंगे। यदि ऐसा होता तो आज भी पाकिस्तान के विदेशी मुसलमान और अपने ही देश के कश्मीरी मुसलमान वहीं रहने वाले आर्य खालसों का कत्ल न करते एवं लगभग पांच लाख हिन्दुओं को कश्मीर से बाहर न निकालते। सच्चाई को जानने का प्रयास करें। ऋषि दयानन्द के सत्यार्थ प्रकाश के 14वें समु. को पढ़ें।

कुरआन में दूसरों पर दया करने एवं दूसरों का परोपकार करने की बात तो बहुत दूर है आओ मुसलमानों द्वारा प्रतिदिन पांच बार पढ़ी जाने वाली नमाज का अर्थ जान कर मुसलमानी मजहब की सच्चाई को जानें। नमाज के शब्द 'अल्लाहु अकबर' =केवल सातवें आसमान का कुरआनी अल्लाह ही महान है, उसे छोड़कर और कोई ईश नहीं। सुब्हा–न कल्ला हुमम व बि हमदि – क व तबा –र कस्मु–क व त आला जद दु– क व ला इल। –ह गैरू –क। 7वां आसमानी अल्लाह तू महिमावान है। प्रशंसा तेरे ही लिए है। तेरा नाम शुभ और मंगलकारी है। तेरी ज्ञान सर्वोच्च है। तेरे सिवा कोई अन्य पूज्य प्रभु नहीं। अर्थात् मुसलमानों के सातवें आसमानी अल्लाह के सिवा कोई दूजा नहीं। जो अल्लाह को छोड़ किसी दूसरे को माने वह काफिर है एवं कत्ल के योग्य है। कुरआन सूरा 8 आयत 12–17 तथा सूरा 9 आयत 5 ।।। आदि। 'अऊजु बिल्लाहि मिनर शैतानिर्रजीम। अर्थ– मैं दुतकारे हुए शैतान से बचने के लिए अल्लाह की शरण में आता हूँ। (ध्यान में रखें कि मुसलमान लोग रूह व अल्लाह के साथ–साथ 'शैतान' और 'जिन्न' को भी मानते हैं जिसकी उपस्थिति कभी भी सिद्ध न किए जाने से एक गप्प है। आश्चर्य चकित करने की बात तो यह है कि कुरआन शरीफ में एक 'इबलीस' नाम के शैतान की चर्चा है जो इतना ताकतवर और स्वछन्द है कि अल्लाह को भी सजदा (सलाम) नहीं करता, तथा अल्लाह इतना कमजोर है कि उसका भी कुछ नहीं बिगाड़ सका। जब 7वां आसमानी अल्लाह अपने एक शत्रु अथवा विरोधी का ही कुछ नहीं बिगाड़ सकता तो वह कुरआन की गप्पों में न जाने क्यों इतना ताकतवर वर्णित है? क्या मात्र गैरों को डराकर मुसलमान बनाने हेतु। इससे यह सिद्ध होता है कि कुरआन में मुसलमान न बनने पर दोजख (नरक) स्थान विशेष (जो कि विज्ञान की दृष्टि से जन्नत के समान ही कोरा झूठ है।) में आग में जलाने, तेल डालने, खाल खींचने आदि की बातें करना केवल गप्प है, मात्र डराकर धर्मपरिवर्तन करने का षड्यन्त्र है। आश्चर्य इस बात का है कि आज के युग में मुसलमान इन्जीनियर, डाक्टर व वैज्ञानिक होते हुए भी कैसे इन कपोल–कल्पित गप्पों पर, विश्वास कर के जिहादी क्रूर व देशद्रोही बन रहे हैं। आज तक किसी राष्ट्र के वैज्ञानिकों को (नासा सहित) आकाश में कोई अल्लाह या जन्नत नहीं मिली।

उद्गीथ स्थली
हिमाचल प्रदेश – 173101

☞ पृष्ठ 06 का शेष

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ..

से देखने के वैश्विक वैदिक सिद्धांतों का अभाव और ये वैदिक सिद्धांत ही आर्य समाज की शक्ति हैं। ये वे शस्त्र हैं जिनसे आर्य समाज ने विगत शताब्दी में मानवता की रक्षा की है और आज भी वह समाज की सेवा कर रहा है।

पिछले दिनों मलेशियन एयरवेज के विमान का अचानक गायब हो जाना जितना विस्मयकारी रहा उससे अधिक आश्चर्यजनक ये रहा कि विमान को खोजने के लिए मलेशिया जैसे विकसित देश के कुआलालंपुर एयरपोर्ट पर तांत्रिकों, ओझाओं द्वारा तंत्रमंत्र करना। ये घटना हमारी मानसिकता का उदाहरण मात्र है। न जाने ऐसी कितनी तंत्र–मंत्र, अंधविश्वास की घटनाएं प्रतिदिन समाज में घटती हैं और दर्शाती हैं कि विज्ञान के इस युग में भी व्यक्ति की मानसिकताओं में परिवर्तन की उतनी ही जरूरत है जितनी पहले थी। तेजी से बदलते परिवेश में भी रूढ़िगत कुरीतियों, पाखण्ड और अंधविश्वास से हम आज भी मुक्त नहीं हुए हैं। यदि प्रातःकाल टी.वी. के चैनलों को खोलकर देखें तो हर कोई चैनल पर भविष्य, राशिफल, तंत्र–मंत्र ये बने समृद्धि के यंत्र, ताबीज बिकते नजर आते हैं। यदि इस मानसिकता से कोई मुक्ति दिला सकता है तो वो मात्र आर्यसमाज ही है।

महिलाओं के साथ बढ़ते बलात्कार, तेजाब फेंकने की घटनाएं, कन्याभ्रूण हत्या, दहेज के लिए उत्पीड़न, इज्जत के खातिर खाप पंचायतों द्वारा बेटियों को मारने का फरमान, फिल्म एवं टी.वी. द्वारा नारी को मात्र उपभोग की वस्तु बना प्रस्तुत करना, नारी समाज पर अत्याचार के नये तरीके हैं।

वर्तमान में पारिवारिक मूल्यों का होता ह्रास, युवाओं में बढ़ती संस्कार हीनता, सम्बंधों का दरकना, आधुनिकीकरण के नाम पर शराब तथा मांस का बढ़ता प्रचलन इन सबने एक ऐसे सामाजिक परिवेश का निर्माण कर दिया जो कल्पनीय नहीं है।

महिलाओं के साथ बढ़ते बलात्कार, तेजाब फेंकने की घटनाएं, कन्याभ्रूण हत्या, दहेज के लिए उत्पीड़न, इज्जत के खातिर खाप पंचायतों द्वारा बेटियों को मारने का फरमान, फिल्म एवं टी.वी. द्वारा नारी को मात्र उपभोग की वस्तु बना प्रस्तुत करना, नारी समाज पर अत्याचार के नये तरीके हैं।

आज देश में बड़े व्यापक एवं सुनियोजित ढंग से आधुनिकीकरण के नाम पर भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को नष्ट किया जा रहा है। युवाओं में अपनी संस्कृति एवं सभ्यता के प्रति हीनता की भावना भरी जा रही है।

उपरोक्त कही गई समस्त समस्याओं से आर्य समाज ने बीती 20वीं सदी में सफलतापूर्वक संघर्ष किया है। आर्यसमाज ने जातिवाद, अशिक्षा, अंधविश्वास, पाखण्ड तथा समस्त कुरीतियों से समाज को बचाने का कार्य किया है। उसने महिला स्वाभिमान की रक्षा की है। देश की संस्कृति का संरक्षण किया है। युवाओं में देशभक्ति एवं स्वाभिमान जगाया है। परिवार में संस्कारिक वातावरण बनाने का कार्य किया है। अंधविश्वास, पाखण्ड, तंत्र का खुलकर विरोध किया है।

आर्य समाज का इन सबके बीच सफल होने का कारण है, उसका एकमात्र ईश्वर में विश्वास, वेदों को प्रमाण मानना तथा वेदानकुल आचरण, आर्षग्रन्थों का पठन–पाठन, यज्ञ संस्कृति में विश्वास, राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक चेतना, हिन्दी एवं संस्कृत से जुड़ाव, शंका समाधान, भ्रमोच्छेनदन, तर्क आश्रित, नैतिक आध्यात्मिक तथा सामाजिक मूल्यों का संरक्षण, वसुधैव कुटुम्बकम् की उदार भावना। ये वे तत्त्व हैं जिनसे आर्य समाज ने भूतकाल में समाज का मार्गदर्शन किया और भविष्य में भी समाज के विकास में ज्योति स्तम्भ का कार्य करता रहेगा।

4–प–28, विज्ञान नगर,
कोटा – 324005
मो. : 09414187428

ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना क्या है?

● **डॉ. गंगाशरण आर्य**

आज सर्वत्र संसार में देखने में आता है कि जगह–जगह मन्दिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों व गुरुद्वारों में अथवा अन्यत्र स्थानों पर खुशी में या दुःख व परेशानी की अवस्था में मनुष्य किसी न किसी प्रकार से ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना करता रहता है। यहाँ सर्वप्रथम तो यह प्रश्न उठता है कि ईश्वर है कैसा व क्या उसकी स्तुति, प्रार्थना, उपासना करने से मनुष्य को सुखों की प्राप्ति व दुःखों से छुटकारा होता है?

महर्षि दयानंद सरस्वती ने आर्यसमाज के द्वितीय नियम में ईश्वर के वास्तविक स्वरूप का परिचय कराते हुए कहा है ''ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।''

ईश्वर की स्तुति आदि के द्वारा जहाँ तक सुखों की प्राप्ति व दुखों से छुटकारे की बात है हमारी ऐसी धारणा केवल ईश्वर भक्ति के सत्य स्वरूप को न जानने व कर्मफल सिद्धान्त को न समझने के कारण है। यह ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना करने का ही तो फल है कि मनुष्य का आत्मा व अन्तःकरण शुद्ध एवं पवित्र होकर सत्य से ओतप्रोत हो जाता है और वह भविष्य में पापाचरण छोड़कर पवित्र कर्मों में प्रवृत्त हो जाता है जिससे सुखों की प्राप्ति व दुःखों से छुटकारा होता है। लेकिन पूर्वकृत कर्मों का भुगतान तो करना ही पड़ेगा क्योंकि ईश्वर की स्तुति आदि करने से ईश्वर न तो प्रसन्न होता है और न ही नाराज होता है। सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि जी कहते हैं कि स्तुति आदि करने से ईश्वर (हमारे शुभाशुभ कर्मों का सुख–दुःख रूप फल देने का) अपना नियम नहीं छोड़ता। आज ईश्वर भक्ति का ये स्वरूप विकृत हो गया है। नाना प्रकार के काल्पनिक देवी–देवताओं के नामस्मरण मात्र को (ईश्वर के गुणों का चिंतन करने की बजाय) भक्ति माना जाने लगा है इसलिए अक्सर लोग दुःखी नजर आते हैं। जबकि ईश्वर भक्ति के द्वारा अर्जित आत्मबल से हम न सिर्फ दुःखों का दृढ़ता से सामना कर पाते हैं बल्कि ईशोपासना से हम आत्मसुधार कर, भविष्य में दुःख प्राप्त कराने वाले कर्मों को त्याग कर सत्कर्मों में प्रवृत्त हो जाते हैं। अतः आइए! ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना के अभिप्रायः को समझने का प्रयास करें।

स्तुति– किसी भी वस्तु के गुण–दोष का विवेचन करना स्तुति कहलाती है अर्थात् जो पदार्थ जैसा है वैसा ही कहना व मानना उस वस्तु की स्तुति कहलाती है, हितकारी होने पर उसकी चाहना उत्पन्न होती है। स्तुति करने का फल ईश्वर में प्रीति एवं उसके गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण, कर्म, स्वभाव को सुधारना आदि है। लोकाचार की दृष्टि से विचार करके देखें, जिससे गुणकर्म स्वभाव मिल जाते हैं वहाँ प्रेम हो जाता है और उसकी ओर से सहायता मिलनी प्रारंभ हो जाती है। ईश्वर की स्तुति के दो प्रकार हैं– सगुण और निर्गुण। इन्हें समझना अत्यन्त आवश्यक है। इन्हें न समझने के कारण ही आज संसार में सगुण को साकार और निर्गुण को निराकार समझने लगते हैं अर्थात् परमेश्वर जब अवतार लेता है तब सगुण अर्थात् साकार कहलाता है, जब जन्म नहीं लेता तब निर्गुण अर्थात् निराकार कहलाता है जो सरासर गलत है। अज्ञानी और अविद्वानों ने उपरोक्त कल्पना करके यह भ्रम जाल फैलाया है जिनको विद्या अर्थात् सत्य ज्ञान नहीं होता वे पशुवत यथा तथा बर्ड़ाया करते हैं। जैसे सन्निपात ज्वर से युक्त मनुष्य अण्डबण्ड बकता है वैसे ही अविद्वानों के कहे व लेख को व्यर्थ समझना चाहिए। ऐसा सत्यार्थ प्रकाश के सातवें समुल्लास में महर्षि दयानंद ने लिखा है। आगे महर्षि जी सगुण व निर्गुण के विषय में लिखते हैं:–

सगुण– वह परमात्मा सब में व्यापक शीघ्रकारी और अनन्त बलवान जो शुद्ध, सर्वज्ञ, सब का अन्तर्यामी, सर्वोपरि विराजमान, सनातन, स्वयंसिद्ध, परमेश्वर अपनी जीवरूप सनातन अनादि प्रजा को अपनी सनातन विद्या से यथावत् अर्थों का बोध वेद द्वारा कराता है। वह 'सगुण स्तुति' है अर्थात् जिस–जिस गुण से सहित परमेश्वर की स्तुति करना है वह सगुण है।

निर्गुण– (अकाय) अर्थात् वह कभी शरीर धारण व जन्म नहीं लेता, जिस में छिद्र नहीं होता, नाड़ी आदि के बन्धन में नहीं आता और कभी पापाचरण नहीं करता, जिसमें क्लेश, दुःख, अज्ञान कभी नहीं होता इत्यादि जिस–जिस राग, द्वेषादि गुणों से पृथक मानकर परमेश्वर की स्तुति करना है वह 'निर्गुण स्तुति' है।

इन दोनों के करने से फल यह है कि जैसे परमेश्वर के गुण, हैं वैसे गुण कर्म, स्वभाव अपने भी करना। जैसे वह न्यायकारी है तो आप भी न्यायकारी होवें। और जो केवल भांड के समान परमेश्वर के गुण कीर्तन करता जाता है और अपने चरित्र को नहीं सुधारता उसका स्तुति करना व्यर्थ है। अतः परमेश्वर के गुणों का बार–बार ध्यान कर उन्हें यथा सम्भव अपने जीवन में धारण करने का प्रयास हमें करना होगा। जैसे परमेश्वर दयालु है, मित्र है, हितैषी है तो हम भी प्राणीमात्र के प्रति यही भाव रखकर तदनुरूप व्यवहार करें, यही सच्ची ईश स्तुति है।'' (अथर्व. 20/85/1) के अनुसार ''भक्तिरस के पैदा हो जाने पर, मिलकर सुखों की वर्षा करने वाले परमेश्वर की ही स्तुति सदा किया करो।

प्रार्थना– प्रार्थना कब की जाती है? जब किसी चीज की कमी महसूस होती है। क्यों की जाती है? ताकि वह कमी पूरी हो सके। किससे की जाती है? जिसके पास वह चीज प्रचुर मात्रा में हो और मिलने की आशा भी हो क्योंकि जिसके पास जो वस्तु है वह हमें वही प्रदान कर सकता है। इस जगत में सबसे बड़ा कौन है? ईश्वर। वही समस्त धन ऐश्वर्यों का स्वामी है लेकिन आज अभिमान में चूर होकर मनुष्य थोड़ी सी विद्या, धन, बल आदि प्राप्त होने पर दूसरों को कष्ट पहुंचाने लगता है लेकिन जब वह ईश स्तुति करता है तो उसे आभास होता है कि ऐश्वर्यों के अपार भण्डार परमेश्वर के समक्ष उसकी स्थिति समुद्र में बून्द के समान है, तो उसका अभिमान टूट जाता है और स्वयमेव ही परमेश्वर का याचक बन जाता है इसलिए जब–जब हमें कुछ कमी महसूस होती है तो उस कमी की पूर्ति हेतु हम ईश्वर से ही प्रार्थना करते हैं। लेकिन इसके साथ–साथ हमें यह भी ज्ञात होना चाहिए कि परमेश्वर से हमें क्या माँगना चाहिए? आज की प्रचलित प्रार्थनाएं ऐसी हैं जैसे अरबपति के समक्ष जाकर सौ रुपये की मांग करना। इसमें जहाँ प्रार्थना करने वाले की मूर्खता झलकती है वहीं दाता का अपमान भी है। अतः परमेश्वर से मेधा बुद्धि, तेज, दुःखों को सहने की क्षमता, कर्त्तव्य बुद्धि, दुर्गुणों को दूर करने की दृढ़ता, श्रेष्ठ मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञानों अर्थात् अनुभवों से सिद्ध ज्ञान–विज्ञान को प्राप्त कराने, मन में शिव संकल्पों के प्रादुर्भाव व मन को कुटिल भावों से हटाने तथा सत्य, आनंद के लिए प्रार्थना करनी योग्य है। सत्यार्थ प्रकाश के सातवें समुल्लास में महर्षि दयानंद जी लिखते हैं कि हमें ऐसी प्रार्थना कभी न करनी चाहिए और न परमेश्वर उसको स्वीकार करता है जैसे कि हे परमेश्वर! आप मेरे शत्रुओं का नाश, मुझको सबसे बड़ा, मेरी ही प्रतिष्ठा और मेरे आधीन सब हो जाएँ इत्यादि, क्योंकि जब दोनों शत्रु एक दूसरे के नाश के लिए प्रार्थना करें तो क्या परमेश्वर दोनों का नाश कर दे? जो कोई कहे कि जिसका प्रेम अधिक उसकी प्रार्थना सफल हो जावे। तब हम कह सकते हैं कि जिसका प्रेम न्यून हो उसके शत्रु का भी न्यून नाश होना चाहिए। ऐसी मूर्खता की प्रार्थना करते–करते कोई ऐसी भी प्रार्थना करेगा–हे परमेश्वर! आप हमको रोटी बनाकर खिलाइए, मकान में झाड़ू लगाइए, वस्त्र धो दीजिए और खेती–बाड़ी भी कीजिए। इस प्रकार जो परमेश्वर के भरोसे आलसी होकर बैठे रहते हैं वे महामूर्ख हैं क्योंकि जो परमेश्वर की पुरुषार्थ करने की आज्ञा है उसको जो कोई तोड़ेगा वह सुख कभी न पावेगा। यजु. अ. 40 मंत्र 2 के अनुसार (कुर्वन्ने ह कर्माणि जिजीविषेच्छत्ँ समाः।।) अर्थात् परमेश्वर आज्ञा देता है कि मनुष्य सौ वर्ष पर्यन्त अर्थात् जब तक जीवे तब तक कर्म करता हुआ जीने की इच्छा करे, आलसी कभी न हो, पुरुषार्थी बना रहे।

प्रार्थना के इस आधार को जानना अनिवार्य है। अंग्रेजी में कहावत भी है God helps those who help themselves अर्थात् ईश्वर उन्हीं की सहायता करता है, जो अपनी सहायता स्वयं करते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मन वचन कर्म से पूर्ण पुरुषार्थ करने पर व्यक्ति ईश्वर की कृपा का अधिकारी बन पाता है। यह तथ्य आम जीवन में भी देखने में आता है। उदाहरण स्वरूप एक व्यक्ति करीब दस लाख रुपये का मकान लेना चाहता है। उसके लिए वह अपने साधनों का हिसाब लगाकर देखता है–ढाई लाख का मेरा छोटा सा प्लॉट बिक जाएगा, ढाई लाख की मेरी फिक्स डिपोजिट है उसे तुड़वा लूंगा, दो ढाई लाख के करीब व्यापारिक प्रतिष्ठानों या जीवन बीमा से उधार ले लूंगा, एक–डेढ़ लाख के करीब अपनी कम्पनी से रियायती दर पर ऋण मिल जाएगा, जिसे थोड़ा–थोड़ा हर महीने कटवाता रहूँगा। इस सारे हिसाब–किताब के बाद भी उसके पास एक डेढ़ लाख कम पड़ जाते हैं अब वह अपने बन्धु–बान्धवों एवं मित्र–सम्बन्धियों से सहायता की प्रार्थना करता है। उसके पुरुषार्थ को देखने के बाद अपनी सामर्थ्यानुसार वे उसकी सहायता के लिए तत्पर हो जाते हैं और उसका वह शुभ कार्य पूरा हो जाता है। इसी उदाहरण को दूसरी प्रकार से समझें कि यदि वह व्यक्ति दस लाख रुपये का मकान लेने की इच्छा से सीधे अपने बन्धु–बान्धवों के पास जाए और कहे कि मैं दस लाख का घर लेना चाहता हूँ, आप मेरी मदद करें। मेरा एक प्लाट है उसे बेचना नहीं चाहता, क्योंकि उसके भाव बढ़ेंगे, फिक्स डिपोजिट तुड़वाना नहीं चाहता क्योंकि उस पर ब्याज मिल रहा है, कम्पनियों से उधार

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

पत्र/कविता

''भीख''उचित या अनुचित

15 अप्रैल 1939 को गांधी जी ने अपने समाचार पत्र में देश के समस्त धर्म प्रेमियों का आवाहन किया कि 'भीख' देन की प्रवृत्ति को त्याग दें। भीख मांगने वाले सभी धर्मों में प्रायः आसानी से प्रत्येक धार्मिक स्थल में बाहर आसानी से मिल जाते हैं वह चाहे शरीर स्तर पर असहाय हों या अस्वस्थ हो भीख मांगने वाला मनुष्व को अपमानित करने वाला है। साथ ही साथ धर्म और समाज को भी शर्मिन्दा करता है। वह सम्पूर्ण मानव वर्ग को स्वाभिमान शून्य व पुरुषार्थहीन बनाता है। भीख देकर जो समाज अपने आप को उच्च प्रवृत्ति का घोतक प्रर्दिशत करने का प्रयास करता है वह भी स्वाभिमानी नहीं हो सकता? भीख के विभिन्न धर्म ने इस बुराई को सम्पूर्ण रूप से लुप्त कराने हेतु भीख देने की प्रवृत्ति को ही दोषी मानते हैं। और भीख देने की प्रवृत्ति को हीन भावना से देखते हैं। स्वामी दयानन्द ने भी इसे समाज का कलंक बताया है।

खेद तो यह है कि देश के समस्त धर्मों के विद्वान् इस परम्परा को रोकने के बजाय इसे प्रोत्साहित करते हैं। प्रायः वह अपने प्रवचनों में ग्रहों को दूषित फल को दूर करने पुण्य संचय करने हेतु भिक्षा को अति उत्तम दर्शाते हैं। इलाहाबाद, हरिद्वार, उज्जैन आदि तीर्थ स्थानों पर आयोजित हाने वाले महाकुम्भ में भिक्षा देने वाले और भिक्षा ग्रहण करने वालों की संख्या तेजी से बढ़ जाती है। यह भी खेद है कि कई बार राज्य सरकारों ने भीख मांगने पर पाबदी लगाने का प्रयास किया परन्तु वह सफल नहीं हुआ। यह उल्लेखनीय है कि भीख मांगने से गांधी जी ने अपने पत्र के माध्यम से देश के समस्त धार्मिक, सामाजिक, बुद्धिजीवी, विचारक से अपील की कि वह भिक्षा या भीख शब्द को प्रोत्साहन न दे। मानव हित में यह अत्यन्त अशोभनीय कलंक है।

प्रश्न यह है कि आज का समाज इस कलंक को निर्मूल करने हेतु कितना जागरूक है।

कृष्ण मोहन गोयल
113–बाजार कोट, अमरोहा–244221

****

धर्म का पालन करो आर्यो

भारत के सब नर–नारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम,
ईश्वर के बनो पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम।

फैला था पाखण्ड जगत में, घोर अंधेरा छाया था,
भूल गए थे जगदीश्वर को, दया–धर्म बिसराया था।
व्याकुल थी दुनियाँ सारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम,
ईश्वर के बनो पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम।।

धर्म समझकर यज्ञों में, नर बलि यहाँ दी जाती थी,
देवों को खुश करने को, गौ हत्या नित की जाती थी।
अज्ञान यहाँ था भारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम,
ईश्वर के बनो पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम।।

बाल विवाह, अनमेल विवाह, इस आर्यवर्त में होते थे,
ऋषियों के सुत–सुता हजारों, देव भूमि में रोते थे।
तब थी दुर्दशा हमारी, अब वैदिक धर्म निभाओं तुम,
ईश्वर के बनों पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम।।

लाखों विधवाएँ बेचारी, वेश्याएँ बन जाती थीं,
यवन, ईसाई ले जाते थे, जीवन भर दुख पाती थीं।
था करुण–क्रंदन जारी, अब वैदिक धर्म निभाओं तुम,
ईश्वर के बनों पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओं तुम।।

ईश्वर की कृपा से, भारत में, ऋषि दयानन्द आए,
किया वेद प्रचार रात दिन, कभी नहीं वे दहलाए।
ऋषि थे अद्भुत ब्रह्मचारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम,
ईश्वर के बनो पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम।।

पोप,पादरी,मुल्ला,पण्डे, ढोंगी सभी पछाड़े थे,
वेद विरोधी नास्तिकों के, ऋषि ने होश बिगाडे थे।
ऋषि थे त्यागी त्तपधारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम,
ईश्वर के बनो पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम।।

वेद विरोधी धूर्त कुचाली, जग में बढ़ते जाते हैं,
माँसाहारी, दुष्ट, शराबी, भ्रष्टाचार बढ़ाते हैं।
है श्रेष्ठ जनो की रव्वारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम,
ईश्वर के बनो पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम।।
भारी है अफसोस आर्यो! आपस में तुम लड़ते हो,

धन दौलत अरु उच्च पदों पर, वृथा रोज झगड़ते हो।
है फूट बुरी बीमारी, अब वैदिक धर्म निभाओं तुम,
ईश्वर के बनो पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम।।

कुटुम्ब कबीला, माल खजाना, पड़ा यहीं रह जाएगा,
धर्म एक है सच्चा साथी, अन्तिम साथ निभाएगा।
ऋषियों की शिक्षा प्यारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम,
ईश्वर के बनों पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओं तुम।।

''नन्दलाल'' ऋषि दयानन्द के, उपकारों को याद करो।
धर्मका पालन करो आर्यो ! जीवन मत बर्बाद करो।
बन जाओ परोपकारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम,
ईश्वर के बनो पुजारी, अब वैदिक धर्म निभाओ तुम।।

पं नन्द लाल निर्भय भजनोपदेशक, पत्रकार
आर्य सदन–बहीन जनपद–पलवल (हरियाणा)
चलभाष – 9813845774

वैदिक वानप्रस्थ व संन्यासियों की आचार

संहिता कैसी हो?

वैदिक सनातन धर्म में चार दिशाओं में चार मठ हैं। जो देशनाम संन्यास पंथ कहलाता है। पूर्व में गोवर्धन मठ (वन अरण्य) पश्चिम में शारदा मठ (तीर्थ आश्रम) द्वारकापुरी उत्तर में जोशी मठ (बद्रीकाश्रम) गिरी पर्वत सागर दक्षिण में श्रंगेरी मठ (रामेश्वरम्) पुरी "भारती" सरस्वती आदि

महर्षि दयानन्द जी ने संन्यास की दीक्षा संन्यासी श्री पूर्णानन्द जी सरस्वती से ली थी जो श्रंगोरी मठ के महात्मा थे। अतः हम श्रृंगेरी मठ के तत्वाधीन देखते है तो श्रंगोरी मंठ में जो महात्मा संन्यासी है। वे पुरी भारती सरस्वती कहलाते हैं। जिनका गोत्र वर्णन निम्न है।

(1) सम्प्रदाय – भूरवार (2) देवता – आदि वाराह (3) देवी – कमक्षा (4) वेद – यजुवेद (5) आचार्य – पृथ्वी धराचार्य (6) ब्रह्मचारी – चैतन्य (7) गौत्र – भू भुर्व (8) तीर्थ – कावेरी अस्तु

महर्षि दयानन्द जी ने अपने सत्यार्थ प्रकाश एवं संस्कार विधि में उपरोक्त कथन का कहीं समर्थन व उलेख नहीं किया केवल संन्यासी के लिये काषाय वस्त्र व दण्ड धारण करने का उल्लेख है। अस्तु! पर आज के वातावरण व परिस्थितियों में आर्य समाज के संन्यासियों के नये–नये पक्ष (बाडे–गुफ) बन रहे हैं उनकी गोत्रावली क्या हो, कोई अपने के वेश, महात्मा, यति, मुनि; तपस्वी आनन्द (नन्द) देव, वर्णी परिव्राजक पति, बोध स्वामी, विष्वङ आदि लिख रहे हैं। वे किस आधार पर किस मठ, या दशनाम् संन्यास की श्रेणी में है या होंगें खुद्र निर्णय कर लें, या अपना पंथ, गोत्र, व श्रेणी बतावें?

महर्षि दयानन्द जी ने आर्य समाज में वेदानुकुल, मनुस्मृति एवं याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार चार आश्रमों का बोध करा कर के ब्रह्मचर्य गृहस्थ, वानप्रस्थ संन्यास आश्रम को पुनः जीवित किया है। पर वानप्रस्थों के लिये पूर्ण विधिविधान व मार्ग दर्शन कहीं उपलब्ध नहीं है। केवल विवाद पद (रूप) श्रेणी है कि वानप्रस्थों का वेश वस्त्र कैसे हो (पीत वर्ण श्वेत या अन्य) वानप्रस्थ की समय अवधि कितनी?

महिला या पुरुष वानप्रस्थी बनने के बाद अपने सम्बोधन के वास्ते अपने नाम के आगे–पीछे व नाम परिवर्तन में क्या शब्द (सर्वनाम) लिखें जिसमे उन्हें सम्बोधित किया जावे? अस्तु

स्वामी आर्येशानन्द सरस्वती
पिण्डवाड़ा

****

☞ पृष्ठ 09 का शेष

ईश्वर की स्तुति,...

लेना नहीं चाहता, क्योंकि ब्याज व किश्त देनी पड़ेगी तो आप सब मिलकर मुझे दस लाख रुपये दे दीजिए, मैं आपका बड़ा आभारी रहूँगा। ईमानदारी से बताएँ कि क्या आप उसकी सहायता के लिए तैयार होंगे? स्वाभाविक है कि आपका उत्तर न में होगा, भले ही वह आपको कितना ही दयालु–कृपालु और परोपकारी कहता रहे। इसी प्रकार कुछ लोग कहते हैं– 'होइए वही जो राम रचि राखा, को करि जतन बढ़ावे साखा' लेकिन ऐसा कहने वाले अकर्मण्यों (कर्महीनों) की प्रार्थना कभी स्वीकार नहीं होती। जिस प्रकार भूख से व्याकुल बालक के रोने को सुनकर, रसोई में कार्य कर रही माँ प्रथम तो सोचती है कि अभी यह काम निपटाकर फिर बालक को दूध पिला दूँगी, पर जब यही बालक घुटनों चलते–चलते माँ के पास आकर उसका पल्लू पकड़कर आशा भरी निगाहों से माँ की ओर निहारता है तब माँ से रहा नहीं जाता, लाख जरूरी काम को छोड़कर भी झपट कर बालक को गोद में उठाकर स्तनपान कराने लगती है, ठीक ऐसे ही जब हम पूर्ण पुरुषार्थ करने के अनन्तर उस जगत धात्री माँ (परमेश्वर) को पुकारते हैं तो वह भी हमारी पुकार को अनसुनी नहीं करता। अतः जो मनुष्य जिस बात की प्रार्थना करता है उसको वैसा ही वर्तमान करना चाहिए अर्थात् जैसे सर्वोत्तम बुद्धि की प्राप्ति के लिए परमेश्वर की प्रार्थना करें उसके लिए जितना अपने से प्रयत्न हो सके उतना किया करें। अर्थात् पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्थना करनी योग्य है। कहने का तात्पर्य है कि जो कोई गुड़ मीठा है, गुड़ मीठा है ऐसा गुणगान करता रहे और उसे प्राप्त करने का यत्न न करे उसे कभी गुड़ प्राप्ति व उसका स्वाद प्राप्त नहीं होता, लेकिन जो यत्न करता है उसको शीघ्र या विलम्ब से गुड़ प्राप्त हो ही जाता है। महर्षि दयानंद सत्यार्थ प्रकाश में कहते हैं कि जैसे पुरूषार्थ करते हुए पुरुष का सहाय दूसरा भी करता है वैसे धर्म से पुरुषार्थी पुरुष का सहाय ईश्वर भी करता है आलसी का नहीं।

महर्षि दयानंद जी ने प्रार्थना की बड़ी सुन्दर व्याख्या करते हुए कहा है कि– ''अपनी पूरी शक्ति से प्रयत्न करने के पश्चात् जो कुछ कमी महसूस हो, उस कमी को पूरा करने के लिए अपने से बड़ों को विनम्रता पूर्वक सहायता के लिए कहना प्रार्थना कहलाता है।''

उपासना–आइए! इस विषय को समझने का प्रयास करते हैं। उपासना शब्द उप+आसन इन दो शब्दों के मेल से बना है। उप का अर्थ है नजदीक और आसन का अर्थ है बैठना और जिसके हम नजदीक बैठते हैं उसके गुण हमारे अन्दर आने लगते हैं। चाहे कम या ज्यादा हम प्रभावित तो होते ही हैं। कहा भी जाता है 'जैसा संग वैसा रंग' वर्तमान स्थिति से सभी अवगत हैं। सारा दिन टी.वी. पर अनेकों भविष्यवक्ताओं द्वारा रत्नों एवं यंत्रों को साधन बनाकर (कर्मफल सिद्धान्त को नकारकर) दुःखों के निवारण करने के दावों के प्रोग्राम देखने मात्र का ही तो परिणाम है कि पढ़े–लिखे लोग भी इनके द्वारा फैलाए गए अन्धविश्वास रूपी जाल में फँसते जा रहे हैं। पाश्चात्य संस्कृति का टी.वी. के माध्यम से प्रसारण का ही तो यह परिणाम है कि आज की युवा पीढ़ी अपनी भारतीय संस्कृति को, अपने पहनावे को तुच्छ समझने लगी है और जो भी विदेशी है बस वही अच्छा है ऐसी सोच पनपने लगी है। इसी प्रकार ईश्वर को जड़ (मूर्तिरूप) मानकर उसकी उपासना से हमारी बुद्धि भी जड़वत हो गई है। अतः हमें ईश्वर के सत्यस्वरूप को जानकर उसकी उपासना करनी चाहिए क्योंकि परमेश्वर का सान्निध्य पाकर या समीपता प्राप्त होने पर सब दोष छूटकर परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण, कर्म, स्वभाव ऐसे ही पवित्र हो जाते हैं जैसे शीत से आतुर मनुष्य अग्नि का सान्निध्य पाकर शीत (ठण्ड) से निवृत हो जाता है इसलिए परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना करनी चाहिए। उपासक जब परमेश्वर में अपने मन को स्थिर रखता है, उस अवस्था में उस पर बहुत कुछ परमात्मा के गुण, कर्म, स्वभाव का प्रभाव हो जाता है। उसका आत्मा और अन्तःकरण पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो जाता है और परमेश्वर के सान्निध्य से नित्यप्रति ज्ञान–विज्ञान बढ़ाकर मुक्ति तक पहुँच जाता है। परमेश्वर आनंद स्वरूप है उसके सानिध्य से जीवात्मा को भी आनंद की प्राप्ति हो जाती है। इसी क्रम में यह स्मरण रखना चाहिए कि परमात्मा तो सृष्टि के कण–कण में व्याप्त है। वह हमारे अन्दर भी विद्यमान है, पर दोषयुक्त, मलयुक्त अन्तःकरण के कारण उसमें व्याप्त परमेश्वर की प्रतीति नहीं होती, जिस प्रकार दर्पण में हमें अपना प्रतिबिम्ब तभी स्पष्ट दिखाई देगा जब दर्पण मैला न हो (मल रहित हो) और वह हिलता–डुलता (विक्षेप अर्थात् स्थिर) न हो और दर्पण व हमारे बीच में कोई तीसरी चीज (आवरण अर्थात् पर्दा) न हो जो कि दर्पण को ढक दे। अतः उपासक को योग साधना द्वारा चित्त के दोषों का निवारण करने में अर्थात् मल (मन में दूसरों को हानि पहुँचाने का विचार तथा पापों के जो आत्मा पर संस्कार हैं उसका नाम 'मल' है) विक्षेप (लगातार विषयों का चिन्तन करने अथवा मन के स्थिर न रहने का नाम 'विक्षेप' है) आवरण (संसार के नाशवान पदार्थों के अभिमान का मन पर पर्दा पड़े रहने का नाम 'आवरण' है) को दूर करने में निरन्तर संलग्न रहना चाहिए तभी उपासना का फल प्राप्त होगा, जिसके बारे में महर्षि दयानन्द ने लिखा है–''जो स्वभाव से परमेश्वर की उपासना करते, यथा शक्ति उसकी आज्ञा का पालन करते और सर्वोपरि सत्कार के योग्य परमात्मा को मानते हैं उनको दयालु ईश्वर पापाचरण मार्ग से पृथक कर धर्मयुक्त मार्ग में चलाके, विज्ञान देकर, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को सिद्ध करने के लिए समर्थ करता है इससे एक अद्वितीय, ईश्वर को छोड़ किसी की उपासना न करें। ''उपासना से आत्मा का बल इतना बढ़ेगा कि पर्वत के समान दुःख प्राप्त होने पर भी न घबराएगा और सबको सहन कर सकेगा, क्या यह छोटी बात है? जो परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना नहीं करता, वह कृतघ्न और महामूर्ख भी होता है क्योंकि जिस परमात्मा ने इस जगत के सब पदार्थ जीवों के सुख के लिए दे रखे हैं, उसका गुण भूल जाना, ईश्वर को ही न मानना कृतघ्नता और मूर्खता है'' (सत्यार्थ प्रकाश, सप्तम समुल्लास)

अन्त में पाठकों से निवेदन है कि उपरोक्त विषय में महर्षि दयानन्द के निम्न संदेश को अपने अन्दर अवतरित कर अपनी जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करें। महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुसार–स्तुति, प्रार्थना व उपासना श्रेष्ठ की ही की जाती है। श्रेष्ठ उसको कहते हैं जो गुण, कर्म, स्वभाव और सत्य–सत्य व्यवहारों में सबसे अधिक हो। सब श्रेष्ठों में भी जो अत्यन्त श्रेष्ठ है उसको परमेश्वर कहते हैं। जिसके तुल्य कोई न हुआ, न है और न होगा। जब तुल्य नहीं तो उससे अधिक क्यों कर हो सकता है। जैसे परमेश्वर के सत्य, न्याय, दया सर्वसामर्थ्य और सर्वज्ञत्वादि अनन्त गुण हैं वैसे अन्य किसी जड़ पदार्थ व जीव के नहीं हैं। जो पदार्थ सत्य हो उसके गुण, कर्म, स्वभाव भी सत्य होते हैं। इसलिए मनुष्यों को योग्य है कि परमेश्वर ही की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करें। उससे भिन्न की कभी न करें।

चरित्र निर्माण मण्डल,
सैनी मोहल्ला, ग्राम शाहबाद,
मोहम्मदपुर, नई दिल्ली

☞ पृष्ठ 07 का शेष

मृत्यु–अधिष्टाता...

कठिन है। क्योंकि जो चीज जिस की है– वही उस का मालिक है। रामलाल को, पढ़ने के बाद, पुस्तक का धन्यवाद सहित, लौटा देनी चाहिये। यदि रामलाल पुस्तक को अपनी ही मानकर न लौटाये तो पुस्तक का मालिक तो अपनी पुस्तक मांगेगा!! न दे तो छीनेगा!!! वह कितना भी चिल्लाये, परिजन भी रोयें–पीटें चिल्लायें–पुस्तक तो देनी ही पड़ेगी। क्योंकि यही नियति और रीति है।

माँ के झिड़कने पर बच्चा रो–रोकर थक जाता है। बच्चे की आँख मिलते ही, माँ प्यार से गोदी में उठा लेती है। बच्चा भूखा है, वह रो रहा है और माँ अपने स्तन से दूध पिलाती है फिर भी भूखा रह जाता है तब माँ दूसरा स्तन उस के मुँह पर रख देती है। बच्चा छककर सो जाता है, जगता है, हँसता है, अठखेलियाँ करता है। माँ कितनी खुश होती है! माँ बच्चे के गंदे कपड़े बदलती है, नहलाती है, बच्चा रोता–चिल्लाता, इधर–उधर भागता है। क्या बच्चे के रोने से, बच्चे के कपड़े बदलना छोड़ देती है? कदापि नहीं!

ऋषियों ने मृत्यु को तो जीवनदायिनी माँ कहा है। परन्तु हम सीखते ही नहीं। प्रतिदिन शव यात्रायें देखते हैं। यह हमारे लिये नहीं! दूसरों के लिये है!! गौतम बुद्ध के पास एक रोती–बिलखती महिला, अपने मृत शिशु के शव को लेकर आई..... इसे जीवन दान दे दो। बुद्ध वस्तु स्थिति समझ करे बोले! देवी, किसी ऐसे घर से कटौरी पीली सरसों ले आवों जहाँ कभी मृत्यु न हुई हो। दिनभर भटकती रही, कोई घर नहीं मिला। सूर्यास्त हो रहा था। मृत्यु का रहस्य समझ गई। ईश्वर ही मृत्यु, जन्म और कर्म फल का अधिधाष्ठाता है।

माता–पिता ने अपने लाड़ले पुत्र–पौत्र का कभी घर से बाहर नहीं निकाला। जब वह उच्च शिक्षा प्राप्त कर इंजीनियर, डॉक्टर, वैज्ञानिक बनने के लिये दूर विदेश जाता है, तब बहुत दुखी होते हैं। परन्तु विदेश जाना नहीं रोक सकते। वे अच्छी तरह समझते हैं कि–विदेश से कुछ पढ़कर, बनकर, होकर, लेकर आयेगा। परिवार की प्रगति, प्रतिष्ठा, यश बढ़ेगा। जब कोई नव नियुक्ति–पदोन्नति–स्थानान्तरण पर जाता है पत्नी, बच्चे, बूढ़े, माँ–बाप दुखी होते हैं। इस बिछोह के दुख में ही खुशी छिपी होती है। ईश्वर ने पुरुष को ''क्रतो'' (कर्म) करने वाला पुरुष कहा है। वेदानुसार जीवन जीने, सदाचार, सद्व्यवहार करने से सद्गति प्राप्त होती है। एक बड़ी विचित्र बात है कि मृत्यु को देखकर भी जानते, पहचानते हैं फिर भी उसे मानते नहीं! जब हम मृत्यु को मानने, परमात्मा को जानने लगेंगे तो धरती भी स्वर्ग बन जायेगी।

ओइम् क्रतो स्मर! क्लिवे स्मर!! कृतम् स्मर!!!

जड़ौदा हाउस–कोटा
राजस्थान

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 14-15/5/2014
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डी.ए.वी. शताब्दी स्कूल, जीन्द में नव-प्रविष्ट बच्चों का हुआ उपनयन संस्कार

डीए.वी. शताब्दी पब्लिक स्कूल, जीन्द में कक्षा 'एल.के.जी.' में नव प्रवेश पाने वाले बच्चों का 'उपनयन संस्कार' समारोह आयोजित किया गया। इस अनुष्ठान का शुभारंभ हवन–यज्ञ से हुआ। यज्ञ मंडप में नए लगभग 130 बच्चों व उनके अभिभावकों, दादा–दादी, नाना–नानी ने यजमान की भूमिका निभाते हुए यज्ञवेदी में आहुतियाँ डाली।

इस अवसर पर प्राचार्य हरेश पाल पांचाल ने अपने संबोधन में कहा कि अब इन नन्हें मुन्नें बच्चों का नाम डी.ए.वी. के साथ जुड़ गया है, अब ये डी.ए.वी. परिवार के सदस्य के नाम से जाने जाएंगे। उन्होंने कहा कि यह वह समय है जब बच्चा आचार्यगण के साथ जुड़ अपनी शैक्षणिक व अध्यात्मिक यात्रा आरंभ करता है।

आचार्य रोहताश शास्त्री ने बच्चों को आशीर्वाद देते हुए कहा कि आज के युग में सबसे बड़ी आवश्यकता है कि हम वैदिक मूल्यों का आचरण करते हुए वर्षों पुरानी संस्कृति को बचाएं। प्राचार्य महोदय ने अभिभावकगण, अतिथिगण व समस्त आचार्यगण का आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम के अन्त में

प्रसाद वितरित किया गया व शान्ति पाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

नये शैक्षणिक सत्र का शुभारम्भ हवन यज्ञ से

हर वर्ष की तरह स्कूल की परम्परा के अनुसार डी.ए.वी. सीनियर सैकण्डरी स्कूल कादियाँ की यज्ञशाला में नये सत्र के उपलक्ष्य में हवन यज्ञ करवाया गया। इस अवसर पर स्कूल के सभी विद्यार्थी एवं अध्यापक वर्ग उपस्थित थे। इस मौके पर शहर के गणमान्य लोग भी शामिल हुए। स्कूल के चेयरमैन श्री लक्ष्मण सिंह, मैडम कुसम लता भण्डारी (L.M.C) मैम्बर, श्री रमेश भण्डारी मन्त्री, श्री लेखराम स्मारक, श्री चरण दास भाटिया, श्री वीरेन्द्र खोसला, डॉ. मंगतराम, पं.

लेखराम स्मारक के प्रधान श्री सुभाष अबरोल, श्री कमल ज्योति भी उपस्थित थे। उन्होंने हवन यज्ञ मे आहुतियाँ डालीं।

स्कूल के चेयरमैन श्री लक्ष्मण सिंह कोहाड़ ने बच्चों को आशीर्वाद दिया और जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। मैडम कुसुम लता भण्डारी ने बच्चों को डी.ए.वी. स्कूल के इतिहास के बारे संक्षिप्त जानकारी दी।

यज्ञ समाप्ति पर स्कूल के प्रिंसिपल श्री अंग्रेज सिंह जी बोपाराय (स्टेट अवार्डी) ने आए हुए मेहमानों का धन्यवाद किया और बच्चों को शिक्षा के महत्व के बारे गहन जानकारी दी इसके पश्चात् सभी बच्चों को प्रसाद बांटा गया।

डी.ए.वी. जलालाबाद में महात्मा हंसराज जयंती मनाई गई

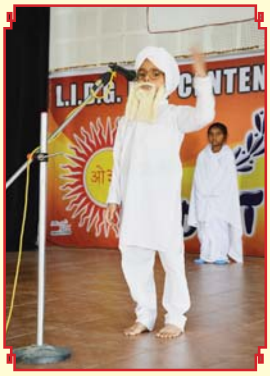

डी.ए. वी. सी. सै. प. स्कूल जलालाबाद परिसर में प्रिंसीपल श्री मती रीतू मैनरो की अध्यक्षता में महात्मा हंसराज जयंती मनाई गई जिसका आगाज़ हवन यज्ञ से किया गया। यजमान रूप में प्रचार्या जी ने महात्मा हंसराज जी के जीवन दर्शन पर प्रकाश डालकर बच्चों व अध्यापकों को उनके जीवन मूल्यों से अवगत करवाया। इसके उपरांत बच्चों ने अपने – अपने अंदाज में महात्मा जी पर भाषण दिए। फैंसी ड्रैस, स्किट व रोल मॉडल के माध्यम से बच्चों ने महात्मा जी के त्याग, तपस्या व कर्त्तव्यनिष्ठा को परिभाषित कर दिया। नन्हें – मुन्हें बच्चों ने भजन गाकर समाँ बाँध दिया। त्याग की मूर्ति महात्मा हंसराज जी ने पवित्र और निष्काम भाव से जो बेजोड़ नमूना और योगदान आर्य समाज, डी. ए. वी. और समूचे राष्ट्र को दिया, निस्संदेह इन्हीं के मार्ग दर्शन के रूप में डी. ए. वी. का वृक्ष आज भी सिंचित हो रहा है।

एक्शन फॉर आटिज़्म की ओर से 'वर्ल्ड ऑटिज्म डे' के उपलक्ष्य में प्रतियोगिता का आयोजन

एक्शन फॉर आटिज़्म की ओर से 'वर्ल्ड ऑटिज्म डे' के उपलक्ष्य में एक चित्रकला प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस अवसर पर डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, जसोला विहार के विद्यार्थियों ने भी भाग लिया तथा बेहतरीन प्रदर्शन किया। कक्षा दसवीं के छात्र मोक्ष त्रिवेदी ने प्रथम स्थान तथा 1500 रु. नकद पुरस्कार प्राप्त किया एवं छठी कक्षा की छात्रा पूजा नेगी ने द्वितीय स्थान तथा 1000 रु. नकद पुरस्कार प्राप्त किया।

विद्यालय के प्राचार्य डॉ. वी.के बड़थ्वाल जी ने विद्यार्थियों को बधाई दी तथा भविष्य में होने वाली अन्य प्रतियोगिताओं के लिए शुभकामनाएँ प्रदान की।

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन,** सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**